नितान्त अबोधोपहत है। जो दास वृत्ति में पड़ी सड़ रही है जिनकी रक्त संचारिनी धमनी में गरमी कहीं पर हुई नहीं। जो ऐसे सीधे और सरल हैं कि उन्हें जिस ढंग पर रक्खो उसी में मस्त हैं। जो औरों की चतुराई का मर्म कुछ न समझ सब खो बैठे। पीड़ा सह रहे हैं पर उस पीड़ा का क्या कारण है कुछ नहीं जानते।

प्रजा में पीड़ा और असन्तोष फैलने के दो बड़े कारण हैं उनके धर्म में हस्तक्षेप और उनका धनापहरण। जब से हिन्दू का चक्रवर्ती राज्य देश से उठा तब से दो विजातीय यहां के सम्राट् हुये एक मुसलमान दूसरे अंगरेज़। मुसलमान सब लोगों को अप्रिय इस लिये थे कि उन्होंने हमारे हिन्दू धर्म को बहुत ही तहस नहस किया और अब इस अंगरेज़ी राज्य में जो प्रजा को पीड़ा है और असन्तोष फैलता जाता है सो इस लिये कि शासन के साथ ही साथ वणिक् वृत्ति पर आरूढ़ हो हर एक बहाने हमारा रुपया ये खींच रहे हैं। सब लोग निःसत्व और निर्धन हो गये। जहां का एक अरब के लगभग धन प्रति वर्ष बाहर चला जायगा वहां कै दिन देश में संपत्ति ठहर सकती है। प्रगट में हमारे धर्म में हस्तक्षेप नहीं होता पर तालीम ऐसी फैलाई गई है जिससे पुरानी बातों पर श्रद्धा लोगों की हटती जाती है। जिसे मुसलमान हज़ार वर्ष में न कर सके उसे तालीम ने सौ वर्ष में कर डाला। नवयुवकों को पुरानी बातों पर श्रद्धा का कम होना भावी भलाई का उत्तम चिन्ह अवश्य है पर उसकी जगह दूसरी नई बात जो अभ्युदय की सूचक हैं और शासक जाति के गुण हैं सो हमारे नवयुवकों में स्थान नहीं पाती। जैसा ब्रह्मचर्य, समस्त जाति का ऐकमत्य, अपने काम में मुस्तैदी, देश प्रेम, देश के लिये स्वार्थत्याग इत्यादि। पान दोष साहब बनना खान पान में स्वच्छन्दता इत्यादि अलबत्ता उनमें आ गया है। साथ ही परिवर्तन विमुखता Conservatism पुराने लोगों में भी एक दोष है। अड़कर यथास्थित Stationary रह कभी किसी जाति ने आज तक उन्नति नहीं किया। हमारा यथास्थित रहना भी शासन कर्ताओं को अपने मन की कर गुज़रने के लिये सुबीता कर देने वाला हुआ। अपनी राज-

नैतिक पटुता काम में लाय ऐसे ढंग से शासन कर रहे हैं कि रुपया हमारा बराबर खिचता जाय । अभी तक तो केवलरुपया खींचना इनका उद्देश्य था अब इस बात की भी विशेष फिकिर रहती है कि सर्वसाधारण का अबोधोपहत होना भी इन से दूर न हो । इसमें सन्देह नहीं अनेक तरह की आशाइसें बढ़ती जाती हैं यह आशाइस हमारे लिये विष है इससे हम आलसी होते जाते हैं देश धन हीन होगया है दरिद्रता अपना डेरा डाल हमें मीजे डालती है अस्तु ।

सच तो यह है कि राजा में राजत्व दृढ़ रखने को प्रजा का समूह प्रधान है । प्रजा को सन्तुष्ट रखना ही राजा की रजाई है । जिस पर इतने लोग अपने जान माल की रक्षा का पूरा भरोसा रख सुख की नींद सोवें तब तो बड़ी भारी ज़िम्मेदारी Responsibility का बोझ उसके कन्धे पर धरा हुआ है । हमारे देश के पुराने राजा लोग इसका क्या मर्म है सो खूब समझे हुये थे । रघुवंश में कालिदास ने लिखा है "तेन धूर्जगतो गुर्वी सचिवेषु निचिक्षिपे" उसने जगत पालन का भारी बोझ मंत्रियों पर रक्खा। और यह तभी हो सकता है जब सब लोग सुख की नींद सोते हों उस समय आप जागता रहे । इससे सिद्ध हुआ कि राजा अपने को सबों का मालिक नहीं बल्कि सबों का कार्य कर्ता वशंवद समझे और प्रजा के धन को प्राण के समान जोगवै । औरंगज़ेब अत्याचारी और ज़ालिम ज़रूर था पर राजनीति के इस मर्म को ख़ूब समझे था । मरती बार अपनी वसीयत में लिख गया था कि उसकी अन्तेष्टि क्रिया बसी ९ सौ रुपये से की जाय जिसे उसने कुरान लिख २ जमा किया था । खयाल करने लायक़ है कि राजा या राजा के वर्ग वाले प्रजा के धन से ऐश और आराम करते जो मनमाना गुल छर्रे उड़ा रहे हैं सो कहां तक राजधर्म के अनुकूल है । इतना ही नहीं बल्कि जब देश में लोग दुर्भिक्ष पीड़ित हो हाहाकार कर रहे हैं । ऐसे में भी राजकीय वर्ग वालों के आमोद प्रमोद में कहीं से कसर नहीं होने पाती । इतने पर भी शासन में हर तरह की कुड़ाई भांत २ के टैक्स और चुंगी के कारण प्रजा में पीड़ा

घटने की कौन कहै प्रत्युत प्रतिदिन बढ़ती ही जाती है। कौन जान सकता है यह पीड़ा कहां तक बढ़े और अन्त में परिणाम इसका क्या हो। इतना अवश्य कहा जायगा कि यह पीड़ा गूंगे को वाचाल अन्धे को सुजाखर अबोध या गाउदी को तेज़ फ़हम और प्रबुद्ध कर मरे हुओं में जान डाल देती है "परिणामेऽमृतोपमा" इसकी तरक्की देश को हित है। तत्व इससे यही है कि सब सहता जाय और धीरे २ पीड़ा से मुक्त होने की चिन्ता में लगा रहे।

ब्रह्मचर्य।

(ठाकुर सूर्यकुमार वर्मा लिखित)

यह लेख नागरी प्रवर्द्धिनी सभा में पढ़ा जा चुका है।

हमारे पूर्वजों ने किसी समय ज्ञान और पराक्रम द्वारा सारे संसार को चकित कर दिया था। सुगन्धित सुमन और स्वादिष्ट फलों से लदा हुआ सनातन आर्य धर्म का दिव्य पौधा जिन्होंने आरोपित किया था। जिस देश में पाणिनि, और पतंजलि से वैयाकरण, गौतम, और कणाद सरीखे दार्शनिक बाल्मीकी और व्यास सरीखे महाकवि, रामचन्द्र के समान मर्यादा पुरुषोत्तम, युधिष्ठिर के समान सत्यवादी, कृष्णचन्द्र आनन्दकन्द के समान योगी, सीता सरीखी ललना ललाम पतिव्रता पैदा हुई थीं। बहुत दिनों की बात नहीं अभी हाल ही के ज़माने में विक्रम, भोज, से विद्यानुरागी, शिवा जी, महाराणा प्रताप, रणजीत सिंह के समान वीर; शंकराचार्य, दयानन्द गुरु गोविन्द सिंह सरीखे महात्मा; अहिल्या बाई, वायजा बाई, लक्ष्मी बाई सरीखी वीर माता और वीर पत्नी उत्पन्न हुईं; उसी देश में इस समय अपने पूर्वजों का नाम और कीर्ति बनाए रखने वाले, बहुत ही कम मानव रत्न दिखाई पड़ते हैं। आज कल हमारी जैसी हीन दशा हो रही है उसका स्मरण करते ही हमारी आखों में जल भर आता है। शरीर में रोमांच हो आते हैं और मन में नाना प्रकार की भावनायें उत्पन्न होती हैं। कभी २ तो यह भी सन्देह उत्पन्न होता है कि यदि हम बराबर इसी तरह गिरते गए तो

एक दिन कहीं हमारा मूलच्छेद तो नहीं हो जायगा। इतिहासों को पढ़ने से, यह बात स्पष्ट प्रगट होती है, कि बहुत सी जातियों ने प्रमोद में फँस कर अपने उत्थान के लिए कोई उपाय न किया इस कारण वे सदैव के लिए रसातल में चली गईं। इस समय उनका नाम निशान तक भी ढूढ़ने से बड़े परिश्रम से मिलता है। हां, यह बात सच है कि आज कल हम लोगों को दरिद्रता ने इतना अधिक जकड़ लिया है कि हम से किसी तरह अपनी उन्नति अथवा सुधार करते नहीं बनता। और यही कारण है कि आज कल जिस दशा में हम हैं क्रमशः उस से नीचे नित्य प्रति चले जाते हैं। अर्थात् हमारी शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति की बची बचाई जरजर इमारत दिनों दिन ढहती जाती है। और इसी कारण, हमारा राष्ट्र रूपी महल नष्ट भ्रष्ट हो गया! हमारी इस हीन दशा का कारण क्या है? सज्जनों हमारे गिरने के अनेक कारण हैं परन्तु उन सबों में मुख्य कारण, मेरी दृष्टि में, यह है कि, हम लोग अपने पूर्वजों के उत्तम चाल चलन और उनकी बांधी हुई सर्वोत्तम परिपाटी, रीति नीति पर नहीं चलते। हम लोगों ने अपने माननीय पूर्वजों के उत्तम गुणों का अनुकरण करना त्याग दिया है। हम अपने पूर्वजों के नाम पर नित्य और नैमित्तिक श्राद्ध तर्पण अवश्य करते हैं। उनकी आत्मा को परोक्ष में सुख पहुंचाने का उद्योग ज़रूर करते हैं परन्तु प्रत्यक्ष में हम उनके गुणों का परित्याग करके उनके रक्षित स्वधर्म और स्वदेश की कुछ भी परवाह नहीं करते। उनके गुणों का त्याग करने से वे गुण अब हम में से प्रायः लुप्त हो गये हैं। हमारे पूर्वज, गृहस्थाश्रम स्वीकार करने के पश्चात् भी ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते थे परन्तु हम लोग आज कल ब्रह्मचर्याश्रम में रह कर भी ब्रह्मचारी नहीं रहते! हमारे राष्ट्र की अवनति, स्वराज्य प्राप्ति न होने का कारण, मुख्य कर, हम लोगों में से ब्रह्मचर्य का लोप हो जाना ही है। नव विकसित कली के समान हमारे युवा ब्रह्मचर्य व्रत की ओर, कुछ भी ध्यान नहीं देते। हमारे सनातन धर्मावलम्बी भाई सदैव एकादशी, प्रदोष इत्यादि सैकड़ों व्रत, सदा रहते हैं। कोई महीना, कोई पक्ष,

कोई सप्ताह ऐसा नहीं बीतता जिसमें वे कोई न कोई व्रत न करते हों। परन्तु खेद है कि ब्रह्मचर्य व्रत, जिस पर देश और समाज की नींव स्थिर है उस पर उनका बिलकुल ध्यान नहीं जाता। प्राचीन समय में, हमारे पूर्वजों ने, बड़े बड़े गहन विषयों पर विचार किए; जिस के कारण वे तत्वज्ञानी कहलाये, सारे संसार के शिक्षा गुरु बने, अतुल पराक्रम के कार्य करके सारे भू मंडल पर अपने विजय का डंका बजाया; ये सब कार्य उन्होंने किसकी सहायता से पूरे किए? उन्हें केवल ब्रह्मचर्य का ही सहारा था। भीष्म-पितामह केवल ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने से ही अजेय हुए और देवव्रत कहलाये। जिन्होंने पाण्डवों की सेना को बराबर १० दिन तक युद्ध में, परास्त किया और जब तक अपने आप अपने करने का उपाय न बतलाया तब तक उन्हें कोई मारने में समर्थ न हो सका! हम आप लोगों में से जो स्वराज्यवादी हैं उनसे सविनय प्रार्थना करते हैं कि जब तक आप लोग भीष्म के समान ब्रह्मचर्य व्रत न करेंगे अथवा अपने साथियों को न करायेंगे तब तक आप स्वराज्य की कौन कहे दास होकर भी देश में न रह सकोगे॥

शरीर सुदृढ़ रहने से ही बुद्धि बलवती होती है। यह बात हमारे पूर्वजों को अच्छी तरह मालूम थी। शारीरिक बल द्वारा ही भावी सब सुख प्राप्त हो सकते हैं और सब प्रकार की उन्नति इसी पर निर्भर है। हमारे पूर्वज अपनी शारीरिक सम्पत्ति को युवावस्था में भी व्रतस्थ रह कर सम्पादन करते थे। ब्रह्मचर्य व्रत के समान पुरुषार्थ दायक अन्य शारीरिक कोई व्रत नहीं है। बड़े बड़े राजनैतिक और सामाजिक कामों को पूरा करने के लिये व्रतस्थ युवा पुरुष की ज़रूरत पड़ती है। बिना इस व्रत को धारण किये और बिना इसकी सहायता कोई कार्य पूरा नहीं हो सकता। ब्रह्मचर्य व्रत की सब से पहिली और सर्व श्रेष्ठ सीढ़ी है। क्योंकि इसी सीढ़ी की सहायता से मनुष्य बड़े बड़े महलों पर चढ़ कर सब प्रकार के सुखों का अनुभव प्राप्त करता है। ब्रह्मचर्य का ही ह्रास होने से हमारे देश की दुर्दशा हुई और हो रही है। आज कल हम लोग ब्रह्मचर्य की इतनी उपेक्षा कर रहे हैं कि जिस

के कारण देश में व्यभिचार दिनों दिन ख़ूब बढ़ रहा है। युवा पुरुष अपने आप अपने पैरों में कुल्हाड़ी मार रहे हैं। दिनों दिन अपनी आयु को कम कर रहे हैं। और इसी कारण दिनों दिन हमारा देश हीन अवस्था को पहुंचता जाता है। साहसी, बलवान, ज़बरदस्त—'कालहु डरहिं न रण रघुवंशी, ऐसे पुरुष अब देखने की तो कौन कहे सुनने में भी नहीं आते। निग्रह और विचार पूर्वक कार्य करने वाले लोग अब हम में कहीं दिखाई नहीं पड़ते! सुदृढ़ और निश्चय पूर्वक कार्य करनें वाले लोग ढूंढ़े जांय तो हम में मिलना कठिन है! साहस का नाम लेंते ही हमारे शरीर में रोमांच हो आते हैं। साहस न रहने से ही हम दासत्व की ज़ंजीरों में इतना अधिक जकड़ गये हैं कि किसी नवीन खोज के कार्य की हम में शक्ति ही न रही। मैं आप को यहां पर साहस का एक उदाहरण बताना चाहता हूं। जिस समय ट्रांसवाल में अंगरेज़ और बुअरों से युद्ध हो रहा था उसी समय हमारे यहां, ग्वालियर राज्य में, एक अंगरेज़ जो म्युनिसिपैलिटी का सेक्रेटरी था और जिसे क़रीब पांच सौ रुपया मासिक मिलता था महा-राज सेंधिया की एक बात पर अप्रसन्न हो गया। वह बात यह थी, महाराज ने कहा आप म्युनिसिपैलिटी के सेक्रेटरी हैं अतएव-आप को मेम्बर लोगों की सलाह से कार्य करना चाहिये। परन्तु उसने महाराज की इस आज्ञा को अस्वीकार करके अपने पद से इस्तेफ़ा दे दियां। इस्तेफ़ा देने के पश्चात् मैं भी एक दिन कार्य वश बंगले पर जाउस्से मिला। वंहां उससे मैंने पूछा कि अब आप कहां जांयगे और क्या करेंगे? आप को ज़रा सी बात के लिये इतने बड़े पद का त्याग करना अच्छा न हुआ। उसने हँस कर मुझ से कहा कि जिस मनुष्य में आत्म गौरव नहीं है उसे मनुष्य कहना भी उचित नहीं। वह पशु से भी गया बीता है। महाराज साहब ने जब मुझे बुलाया था तब मुझ से यही शर्त हुई थी कि मैं स्वतंत्र रूप से कार्य कर सकूंगा। मुझे कार्य करने के लिये सब अधिकार प्राप्त होंगे। मैं सीधा दरबार का मातहत समझा जाऊंगा। परन्तु अब महाराज मेम्बरों के आधीन

रह कर मुझे कार्य करने की आज्ञा देते हैं। मैं इस प्रकार अपने आत्म-गौरव को नष्ट कर के अपना पेट पालन करना नहीं चाहता। ऐसा करने से मुझ पर और मेरी जाति दोनों पर कलंक का टीका लगेगा। मैं इस तुच्छ नौकरी के लिए इस प्रकार कलंकित होना नहीं चाहता। अब मैं यहां से मंसूरी जाऊंगा और वहां अपने एक मित्र के पास अपनी पत्नी को छोड़ कर मैं स्वयं ट्रांसवाल पहुचूंगा। मैं वालंटियर हूं। अतएव वहां जाकर युद्ध में शरीक हूंगा। क्योंकि आजकल हमारी जाति के ऊपर महा संकट उपस्थित है। यदि युद्ध में हमारे देशवासियों की विजय हुई और मैं भी जीता जागता बच आया तो फिर इस प्रकार की नौकरियां तो मुझे हज़ारों मिल जायगी। हम लोग नौकरी का परवाह नहीं करते। हम लोग परवाह करते हैं आत्म गौरव, मान, मर्यादा और प्रभुत्व की। इन वस्तुओं को पाने के लिए हम लोग अपने जीवन की कुछ भी परवाह नहीं करते। ट्रांसवाल में जो हमारे लाखों आदमी मर रहे हैं वे केवल अपने देश की मान मर्यादा और प्रभुत्व की इच्छा से ही अपने प्राण विसर्जन कर रहे हैं। जिस पुरुष अथवा जाति के लोगों में प्राण देने की शक्ति अथवा साहस है उसके लिए हज़ार पांच सौ रुपया मासिक की नौकरियां मिल जाना क्या कठिन है। वे जब चाहें तभी उसे सहज में ही प्राप्त कर सकते हैं।

सज्जनों! आपने समझा कि एक अंगरेज़ पांच सौ रुपया माहवार की नौकरी पर क्यों लात मार देता है? उस में साहस है। प्राण देने की शक्ति है। परन्तु क्या प्राण देने की शक्ति और साहस होना विना ब्रह्मचर्य के सम्भव है? अंगरेज़ों में कोई अवगुण नहीं हैं, वे दुराचारी नहीं होते यह मैं नहीं कहता। परन्तु उनमें से अधिकांश मध्यम कक्षा के ब्रह्मचर्य का पालन अवश्य करते हैं और यही कारण है कि वे सब प्रकार के कष्टों को धैर्य के साथसहन कर लेते हैं। मनुष्य के लिए जितनी मानसिक बल की आवश्यकता है उतनी ही शारीरिक बल की जरूरत है। ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने से, मनुष्य में, शारीरिक बल ही नहीं आता वरन मानसिक बल की भी उसी के द्वारा सिद्धि प्राप्त होती

है। अतएव शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार की उन्नति प्राप्त करने के लिए अत्यन्त आवश्यकीय ब्रह्मचर्य व्रत का संस्कार फिर से युवा पुरुषों के कलुषित मनों पर डालना चाहिए। जिस प्रकार लोगों का ध्यान इस ओर आकर्षित हो उसी प्रकार से उद्योग करना चाहिए।

सज्जनों! क्या हमारे देश के बड़े २ सुशिक्षित राज-नीतज्ञ पुरुषों का यह कर्तव्य नहीं है कि वे इस ओर ध्यान दें? जो लोग गवर्मेंट की छोटी सी छोटी बातों की आलोचना में बात का बतंगड़ बना देते हैं; क्या वे अपनी जाति की इस बड़ी भूल पर ध्यान नहीं देंगे? जिन अधिकारों को आप लोग गवर्मेंट से मांगते हैं; क्या वे अधिकार आप लोगों को बिना ब्रह्मचर्य व्रत का साधन किए प्राप्त हो सकते हैं? ये सब बातें हमारे देश के उन नेताओं को सोचना और मनन करना चाहिए जो साधन को एकत्रित किए बिना गवर्मेंट से, स्वत्व पाने के लिए, चिल्ला चिल्ला कर, गला फाड़े डालते हैं और निष्प्रयोजन प्रस्ताव पर प्रस्ताव पास करते चले जाते हैं। संसार के इतिहास पर एक सरसरी दृष्टि डालने से आप लोगों को मालूम होगा कि संसार में अब तक जितने स्वतंत्र राजा अथवा महाराजा हुए वे सब राजनीतज्ञ होने के साथ ही योद्धा भी थे। बिना दोनों प्रकार की शक्ति सम्पन्न हुए कोई मनुष्य अथवा जाति स्वतंत्र रूप से राज्य करने अथवा अधिकार पाने में समर्थ नहीं हो सकी न आगे को होने की आशा है। वर्तमान समय में ही आप लोग अमेरिका के प्रजा तंत्र राज्य की ओर देखिए उसमें आज तक जितने प्रेसिडेंट हुए वे सब राजनीतज्ञ होने के अलावा जनरल भी अवश्य थे। हमारे कहने का तात्पर्य यह है कि शारीरिक और मानसिक शक्ति उत्पन्न हुए बिना हम से कभी स्वतंत्रता देवी प्रसन्न नहीं हो सकतीं"। अतएव ब्रह्मचर्य व्रत को राजनैतिक आन्दोलन का मूल मंत्र समझ इस महाव्रत का पालन हम सब लोगों को एक चित्त हो मिल कर करना चाहिए।

सज्जनों! पहिले समय में लोग अपने बालकों को सात आठ वर्ष का होते ही विद्या प्राप्ति के लिए गुरुकुल में भेज देते थे। वे वहां सत्त-

रह अठारह वर्ष तक रह गुरू की सेवा में तत्पर हो श्रद्धा पूर्वक धर्म और नीति की शिक्षा ग्रहण करते हुए ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते थे गुरुकुल वास के समय में उनका शारीरिक बल पूर्ण रूप से बढ़ जाता था उनका मन सुदृढ़ और उनमें कार्य करने की क्षमता उत्पन्न होती थी। उस समय लोग कम से कम २५ वर्ष की उमर तक विद्या उपार्जन करते थे। अतएव बालकों की शारीरिक उन्नति २५ वर्ष तक बराबर होती रहती थी। आज कल गुरुकुल की जगह कालिज और स्कूलों ने छीन ली है। उस समय के गुरुकुल और आज कल के स्कूल कालिजों में ज़मीन आसमान का अन्तर है। पहले समय में बालक गुरुकुल में ठहर कर सदाचारी, धर्म शील, नीतज्ञ, सुदृढ़ और सतेज होते थे। परन्तु आज कल के लड़के स्कूल से निकलते ही तेज और श्री रहित दिखाई पड़ते हैं। कालेज से निकलते ही उनकी आखें कमज़ोर, कमर झुकी हुई, चेहरे पर झुर्रियां पड़ी हुई दिखाई पड़ती हैं! किसी बहुत बड़े कार्य करने का उन्हें साहस नहीं पड़ता! उन्हें सूझती है केवल नौकरी! गुलामी!! और दासत्व!!!

सज्जनों! आप में से बहुत से लोग मुझसे यह पूछ सकते हैं कि इसका कारण क्या? बहुत से लोग तो यह कहते हैं कि आज कल की शिक्षा-प्रणाली अच्छी नहीं। विद्यार्थियों को बहुत से विषय एक साथ पढ़ाये जाते हैं, अङ्गरेज़ी के छोटे २ अक्षरों को पढ़ने से उनकी आखें कमज़ोर हो जाती हैं। परन्तु मेरी समझ में इन सब कारणों का एक महा कारण यह आता है कि आज कल विद्यार्थी दशा में शिक्षा पूरी होने से पहले स्कूल और कालिजों में ही हमारे बालकों का ब्रह्मचर्य नष्ट हो जाता है। गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने से पहले वे अपना ब्रह्मचर्याश्रम कालिज में ही समाप्त कर देते हैं। पहले समय में विद्यार्थियों को अपना आचरण बहुत ही शुद्ध रखना पड़ता था। गुरुकुल में रह कर अधिकारानुसार शिक्षा पूरी करने पर विद्यार्थी को गृहस्थाश्रम में प्रवेश होने की आज्ञा मिलती थी। अर्थात् वह उस समय विवाह करने योग्य समझा जाता था। परन्तु आज कल की प्रथा

उस समय से बहुत ही विपरीति है सरस्वती देवी के प्रसन्न होने से पहले ही बालक पिता हो जाते हैं ! जिस उमर में बालक के मन में शारीरिक बल की वृद्धि के कारण हृदय में नई २ उमंगे उठती हैं नया उत्साह, तथा साहस आता है; उस उमर में उन्हें काम कला सूझती है यह कुसमय में पिता बनने का ही बुरा परिणाम है । जिस उमर में लोग काम करने के योग्य होते हैं उसी उमर में आशा देवी रूठ जाती हैं ! देश की भलाई का सारा दार मदार देश के नवयुवकों पर अवलम्बित है । जिस देश में युवा कार्य करने के योग्य होते ही, ब्रह्मचर्य का पालन न करने से, मुरझाई हुई कली के समान भावी भलाई से निराश रहते हैं उस देश की उन्नति कैसे हो सकती हैं ? ब्रह्मचर्य का यह मतलब नहीं हैं कि मनुष्य जन्म भर कुंवारा रहे । ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले मनुष्य को चाहिए कि वह अपने शरीर, मन और आचरणों को पवित्र बनावे , अर्थात् शारीरिक ब्रह्मचर्य के साथ ही साथ मानसिक ब्रह्मचर्य का भी पालन करना चाहिए । क्योंकि शरीर को निरोग्य और सुदृढ़ रखने पर भी यदि मन बुरे विचारों से कलुषित किया जाय--रेनाल्ड साहब के उपन्यास अथवा शृंगार रस प्रधान कविता अथवा नाटकों का अध्ययन किया जाय तो मन की पवित्रता नष्ट हो जाती है । मन अपवित्र होजाने से ब्रह्मचर्य पालन करना अथवा न पालन करना दोनों बराबर हैं । अतएव मन को कलुषित न होने देना और अपने आचरणों को पवित्र रखना ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने की पहली सीढ़ी है । इन्द्रिय निग्रह और ज्ञान की प्राप्ति ब्रह्मचर्य व्रत की दूसरी सीढ़ी है । पहली सीढ़ी पर चढ़ना अधिक कठिन नहीं है परन्तु दूसरी सीढ़ी पर चढ़ना तनिक कठिन काम है । यदि पहली सीढ़ी पर चढ़ कर हम लोग उद्योग और अभ्यास से शनैः शनैः दूसरी सीढ़ी पर चढ़ जांय तो हमारी वीर्य सम्पत्ति सदा के लिये दृढ़ हो जाय। कठिन से कठिन परिश्रम का कार्य आ पड़ने पर हम भी उसे सहज में ही पूरा कर सकें । इस लिये उचित है कि हम ब्रह्मचर्य के पालन में दृढ़ हों और दूसरों को भी इस रास्ते पर लाने में उद्योग कर अपने को स्वराज के योग्य बनावें ।

पुजारी और व्योपारी का झगड़ा।

एक समय गुणवान विप्र से व्योपारी का हुआ मिलन ॥
उभय परस्पर दोष बताकर युगल महाशय लगे लड़न ॥ टेक ॥
कहें पुजारी सुनों सेठ जी सबका धर्म गँवाते हो ॥
मोरस चीनी मँगा २ कर शहरों में बिकवाते हो ॥
बड़ी अपावन धर्म नशावन तुम्हीं यहां पै लाते हो ॥
धर्म खोय धनवान कहाये मन में नहीं लजाते हो ॥
इस अधरम से किया इकट्ठा पड़ा रहैगा घर में धन ॥ १ ॥
कहैं तमक कर सेठ पुजारी तुम क्यों भोग लगाते हो ॥
जान बूझ कर मोरस चीनो हलुए में डलवाते हो ॥
फेर २ कर हाथ पेट पर लप २ लड्डू खाते हो ॥
चोखी बनी मिठाई कह कर तुम जिजमान रिझाते हो ॥
बुद्धि भ्रष्ट हो गई इसी से बिगड़ गया है चाल चलन ॥ २ ॥
जब जहाज़ चीनी का आवै कौए से घिर जाते हो ॥
करो नफ़ा की आश वहां पर बढ़ २ दाम लगाते हो ॥
घर में लाकर छल से उसको देशी खांड़ बनाते हो ॥
नहीं पाप से डरौ बड़ों के यश में दाग़ लगाते हो ॥
सतबादी थे पुरखे जिनके लड़के भूले सत्य बचन ॥ ३ ॥
देख मिठाई लाल पुजारी चेलों को धमकाते हो ॥
हलवाई की करो बुराई उसके दाम घटाते हो ॥
है आधीन तुम्हारे भारत-अधरम तुम्हीं कराते हो ॥
फँस बिषयों में नहीं किसी को सच्चा ज्ञान सिखाते हो ॥
थे पुरखे विद्वान तपस्वी तुम लड्डू के हो बरतन ॥ ४ ॥
तुम मुखिया ब्यौपार बणिज के श्रोत तुम्हीं से जारी है ॥
नहीं धर्म की चाह आपको दौलत जी से प्यारी है ॥
छल से मिला खांड़ में चीनी सब की बुद्धि बिगारी है ॥
इसी पापकी अधिक दया से भारत हुआ भिखारी है ॥
टुकड़ों को तुम भी तरसोगे इक दिन सेठ भिखारी बन ॥ ५ ॥

महतर तक इसको नहिं खावें गट २ जिसे गटकते हो ॥
पुन्यवान पुरषों अपने को हाथों नर्क पटकते हो ॥
धर्म ओट में पाप कराते चेलों सहित भटकते हो ॥
जीभ लोक परलोक बिगाड़ै अधबर पार लटकते हो ॥
खाई मिठाई पाई पाई यही तुम्हारा रहा भजन ॥ ६ ॥
सुनलो भाई छोड़ लड़ाई चीनी भ्रष्ट मिठाई है ॥
धन और धर्म बुद्धि को नाशै रोग शोक दुखदाई है ॥
खाना और मंगाना छोड़ो छल की बुरी कमाई है ॥
प्रेम परस्पर करो तुम्हारा ईश्वर सदा सहाई है ॥
छेदालाल का ख्याल मान कर जगदीश्वर की गहौ शरन ॥ ७ ॥

छेदालाल।

सूरत की बेडौल सूरत।

दूसरा दृश्य।

स्थान–तिलक के ठहरने का ख़ेमा तिलक और लाजपत।

तिलक–गत कांग्रेस में स्वीकृत मन्तव्यों का जीवन दान मात्र मैं चाहता हूं। स्वदेशी, स्वराज, स्वशिक्षा, और बहिष्कार को दृढ़ता के साथ स्थान दिया जाय यही मैं मांगता हूं। इन्हीं बातों के लिये मैं प्रतिज्ञा बद्ध हूं इन्हीं के लिये मेरा झगड़ा है इन्हीं पर सब रगड़ा है।

लाजपत–मैं समझता हूं इसमें किसी को उज्र न होना चाहिये इससे तो नरम दल वाले सब सहमत होंगे। हमें तो इस समय एकता का बीज बोना है तब सबों की एक राय होनी चाहिये।

तिलक–अवश्यमेव यदि नर्मों में हठ और दुराग्रह न होता अथवा राष्ट्रीय दल को हेठा न करना होता।

लाजपत–नरम लोग भी विद्वान् और बुद्धिमान् हैं कांग्रेस को आज तक उन्होंही ने पाला पोषा। इसमें कामयाबी का मुझे पक्का भरोसा है। जाता हूं और शुभ समाचार अभी तुर्त लाता हूं।

तिलक–शुभस्य शीघ्रम् जाइये (स्वगत) कायरता ने नरमों की बुद्धि में भ्रम छोड़ रक्खा है तुम्हारे कृतकार्य होने की सर्वथा निराशा है। (प्रगट) आपको कृतकार्य होने की आशा है तो जाइये मैं भी अपने लोगों को आपका सहकारी होने के लिये उद्यत करता हूं। (प्रस्थान) (नेपथ्य में)

उठो हिन्द के पूत कभी कटुबचन सहोना।
प्रान देहु मर्याद हेतु अपमान सहोना॥
दै छाती पर लात गर्व इन कर सब तोड़हु।
आज सिखावहु पाठ यही दुष्टन सिर फोड़हु॥

क्या हम लोग राज और देश के द्रोही हैं। यही क़ानून दानी और लियाक़त की कसौटी है।

तिलक–मालूम होता है यह घोष बाबू की छपी हुई स्पीच का नतीजा है जिस में उन्होंने नेशनलिस्टों को जो कुछ चाहा सख्त सुस्त कह डाला है।

(हैदर रज़ा और अजीत को साथ लिए कई एक नेशनलिस्टों का प्रवेश)

हैदर–(विनय पूर्वक) गर मुल्क के ख़ातिर मेरी दुनियां में से तौकीर हो। हाथ में हथकड़ी हो अरु पांवों में जंज़ीर हो। आंखो के ख़ातिर तीर हो मिलती गले शंशीर हो। मर कर भी मेरे जान पर ज़हमत बला ताज़ीर हो। मंजूर हो मंज़ूर हो मंज़ूर हो मंज़ूर हो।

अजीत–दोस्तो आप लोगों से मेरी यही आरज़ू है ये नरम बड़े बुज़दिल और मक्कार हैं इनका साथ छोड़ो और स्वदेशी की तरक्क़ी में तन मन से लग जाओ अच्छा किसी ने कहा है–"यही है आरज़ू मित्रो चलन अपना स्वदेशी हो। रहन अपना स्वदेशी हो सहन अपना स्वदेशी हो। जहां जायें जहां बैठें करैं चरचा स्वदेशी की हृदय अपना स्वदेशी हो कथन अपना स्वदेशी हो। इत्यादि।

तिलक–सुनहु धीर गंभीर वीर हिन्दूकुल भूषण।
धरम धुरीण प्रवीण शान्ति प्रिय जित सब दूषण।

क्रोध करन भल नहीं क्रोध तें बिगड़त काजा ।
प्रेम सहित सब मिलहु नांहि एहिमें कछु लाजा ।
जो सुनि हैं मम विनय देश हितकारी भाई ।
ईश्वर कहँ धनवाद कनग्रेस श्रहै बधाई ।
त्यागी सकल विरोध यही है हमरी शिक्षा ।
झगड़न नीचो काम देहु यह हम कहँ भिक्षा ।
तन मन से जो पर कारज में अपना जन्म बिताता है ।
पुनि स्वदेश बन्धुन प्रसन्न लखि जिसका मन हरखाता है ।*

चलो अब लाला लाजपत से मिलें देखिये उन्होंने क्या ते किया है (सब गये)

पुस्तक परीक्षा ।

(सुन्दर सरोजनी)

यह एक संयोगान्त उपन्यास राम नगर (चम्पारन) राज्य के श्रीयुत पं० देवीप्रसाद शर्मा उपध्याय द्वारा विरचित और प्रकाशित । इसमें प्राकृतिक मनोहरता, प्रेम, मैत्री आदि का वर्णन है । इस पुस्तक को लोगों ने कितना पसन्द किया है । इसका प्रमाण यही है कि इसके दूसरे संस्करण होने की नौबत हुई । इसके सिवाय इसमें दो रंगीन ग्लेज़्ड चित्र हैं एक पुस्तक की नायिका सरोजनी का दूसरा राम नगर चम्पारन के राजा का । उक्त महाराजा का चित्र इस पुस्तक के साथ लगाने में ग्रन्थकर्ता ने पुस्तक के पढ़ने वालों का क्या लाभ समझा हम नहीं कह सकते । महाराज में कौन सी ऐसी विशेष बात है जिससे पढ़ने वालों को उस चित्र के देखते ही चित्त में कुछ असर उपजेगा पुस्तक मिलने का पता—पं० सिद्धिप्रसाद उपाध्याय भदैनी बनारस सिटी मूल्य ।=)

नागरी लिपि पुस्तक (सीरीज़)

गौरीशंकर भट्ट विरचित और संपादित—नागरी लिपि में खुशखत होने के लिये यह सीरीज़ बहुत ही उत्तम है उक्त भट्ट जी ने बड़े परिश्रम से इसे संपादन किया है । नागरी के प्रेमियों को उचित है कि इन्हें सहायता दे इनका उत्साह बढ़ावें । यह सीरीज़ ४ हिस्सों में है मूल्य चारों का ।) है पारदर्शी स्लेट परमोपयोगी वस्तु का मूल्य ॥) है मिलने का पता मसवानपुर कानपूर—गौरीशंकर भट्ट ।

* (प्रदीप की ता० -२९ अगस्त के अंक में देखो) ।

नृसिंह।

उपरोक्त नाम का मासिक पत्र श्री अम्बिकाप्रसाद वाजपेयी के सम्पादकत्व में कलकत्ते से निकलता है। इसका पांचवां अंक मेरे पास है जिसमें लोक मान्य तिलक महाराज का एक चित्र तथा उनके चरित्र का प्रारंभ इस संख्या से हुआ है और टुकड़ा २ करके इनकी पूरी जीवनी विस्तार पूर्वक देने की इस पत्र ने कमर बांधी है। लेख इसमें बड़े ही उत्कट रहते हैं। राजनैतिक विषय के नित्य नये जितने पत्र निकलें अच्छा है। इस पत्र का कागद तथा सफ़ाई आदि का मोहनी पन विदेशी होने से अवश्य अश्रद्धेय है। आशा है यह पत्र गरम दल का हो अपने कर्तव्य पर ध्यान देगा। पता मैनेजर "नृसिंह" नं० १२-३ बासा धोबा पाड़ा स्ट्रीट (जोड़ा सांको) कलकत्ता वार्षिक मूल्य २)

ब्रह्मद्रोह का फल और होली में भेंट।

काशी निवासी मास्टर मुकुन्दलाल साकिन बुल्ला नारा बनारस ने निज युक्ति से बनाकर प्रकाश किया। इन दोनों पुस्तकों में तुक बन्दियां हैं पर तारीफ़ है कि पूरी किताबें पढ़जाइये पुस्तकों में क्या है और उन तुक बन्दियों के क्या मतलब है न समझ पड़ेगा। मूल्य -)॥ में दोनों पुस्तकें।

मुहिब्ब हिन्द।

इस छोटी सी पुस्तक में देशभक्ति के चुने हुये बहुत से गान का संग्रह है। गीतें एक से एक बढ़ कर हैं हर एक देशभक्त को इस पुस्तक को अपने पास रखना चाहिये और इसका प्रचार सब को करना उचित है २५ या ३० कापियां मंगा लोगों में बांट हर एक को देश भक्त बनाना चाहिये। मूल्य फी पुस्तक)॥ अधिक लेने से कुछ किफ़ायत पड़ेगी पता मुन्शी गुरुप्रसाद मौतसिमगंज इलाहाबाद।

लाजपत महिमा।

एक हज़ार में कुछ थोड़ी ही सी बच रही हैं। लाजपत राय जी के भक्तों को अवश्य इसे लेकर उनके उपदेशमय लेख पढ़ भारत की उन्नति पर कटिबद्ध हो जांय। मूल्य =) है पता–महादेव भट्ट अहियापूर–प्रयाग

R. E. G. D. No. 308.

हिन्दी प्रदीप

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै।
बचि दुसह दुरजन वायु सों मणिदीप समथिर नहिं टरै॥
सूझै विवेक विचार उन्नति कुमति सब यामे जरै।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै॥

मार्च सन् १९०८

मासिक पत्र

जि० ३० सं० ३

सम्पादक और प्रकाशक, पं० बालकृष्ण भट्ट

विषय सूची।

वार्षिक मूल्य २॥) प्रति संख्या ≈)

अभ्युदय प्रेस, प्रयाग में मुद्रित हुआ।

-:॥ श्री ॥:-

जिल्द ३० | मार्च सन् १९०८ ई० | सं० ३

चूकते ही गए।

इसमें सन्देह नहीं गवर्मेंट ने बड़ी हिकमत अमली से हिन्दुस्तान को हस्तगत किया पर आरम्भ ही से चूक होती गई। यद्यपि वह चूक चूक न थी वरन वह भी उसी हिकमत अमली का एक हिस्सा था। किन्तु कहावत है। "मेरे मन कुछ और है कर्ता के कुछ और"। जो कुछ भूल भी बन पड़ी वह अपने ही फ़ायदे की दृष्टि से। जैसा जब यहां सरकारी राज्य स्थापित हुआ तब दफ़्रों में काम करने वाले अल्प वेतन में न मिलते थे गोरे यूरोपियनों को बड़ी तनख़ाहें देनी पड़ती थी इस लिये शिक्षा विभाग स्थापित किया गया और थोड़ी तनख़ाह दे बड़े से बड़ा काम यहां वालों से निकलने लगा।

"विद्या नृप युवती लता ये न लखैं कुल जात।
जो जाके निकटै बसै ताही सो लपटात॥"

शिक्षा का बीज जो बोया गया वह पीछे इतना फबका और बढ़ा कि इलम की हर एक शाख़ में और विद्या के प्रत्येक विभाग में एक से एक चढ़ बढ़ कर योग्यता काबिल और आलिम फ़ाज़िल निकलने लगे। यहां तक कि बहुधा "कम्पिटीशन" होड़ या पणबन्ध में अङ्गरेज़ों के भी आगे बढ़ गये। जो आजन्म परिश्रम करते हैं और जो अङ्गरेज़ी अपनी

निज की भाषा है उसमें भी इनको हिन्दुस्तानियों के मुक़ाबिलें कभी २ दब जाना पड़ा है। अब तालीम को घटाने की सब २ कोशिशें हो रही हैं और भीतरी भाव यही मालूम होता है कि हम हिन्दुस्तान को उसी जेहालत की हालत में फिर उतार लावें जिस हालत में हमने इसे प्रारम्भ में पाया था पर वह अब कैसे हो सकता है। जब जिसका ज़ायक़ा जिसे मिल जाता है तो वह मिठाई उसके मुंह लग जाती है फिर छुटाये नहीं छुटती। शिक्षा का स्वाद हम लोग पा गये अब अपने निज का जातीय विद्यालय National Schools and National Colleges जहां तहां देश के प्रत्येक विभाग में स्थापित होने की फ़िकिर हो रही है और जल्द ऐसा समय आने वाला है कि बड़े से बड़े विद्वान् जातीय शिक्षा के क्रम पर तैय्यार हो देश को उन्नति के सोपान पर चढ़ाय लावेंगे।

देशके एक छोर से दूसरे तक रेल दौड़ा दी गई एक २ छोटे से छोटे शहर और गावों तक रेल दौड़ गई जिसमें रालीब्रदर को खेतिहरों के एक २ खेत से अन्न ढो विलायत पहुंचाने का सुबीता हो और सफ़र में मुसाफिरों का जो कुछ धन देश का देश ही में रह जाता था वह सब रेल के किराये के द्वारा विलायत पहुंचे। रोज़गारियों को केवल हम्माली की भांत बट्टा और दलाली मात्र शेष रही मुनाफ़ा सब रेल के किरायों ही में चला जाता है। दूसरे फ़ौज इत्यादि के पहुंचाने में सुबीता होगया। ऐसे २ न जानिये कितने फ़ाइदे सोच रेल यहां चलाई गई। यह कौन जानता था कि इससे दूर से दूर देश के रहने वाले आपस में मिल एक दूसरे के साथ हमदर्दी प्रेम और मैत्री प्रकाश करेंगे देशानुराग महा पादप की जड़ परस्पर सहानुभूति के अमृत जल से सिंचित होगी। पेशावर से केपकमोरिन तक बन्देमातरम् की जय ध्वनि से गूंज उठेगा। कहां मन्द्राज कहां लाहौर मद्रासी और पंजाबी दोनों गले से गले मिल अपने २ दुःख की कहानी एक दूसरे से कह छाती ठंढी करेंगे।

जब देखा विलाइत में गोरे इतने नहीं हैं कि शैतान की आंत सा इतना बड़ा देश केवल उन्हीं के भरोसे अधिकार में आ सके इस लिये हिन्दु-

स्तानियों की फ़ौज भोजपुरिये, वैसवार, सिक्ख, रुहिल्ले और भोटियों की तैय्यार की और हिन्दुस्तानियों ही की मदत से हिन्दुस्तान को फ़तह किया पीछे यह फ़िकर हुई कि कहीं ऐसा न हो कि फ़ौज के इन लोगों में जागृति पहुंचे और ये चैतन्य हो अपना देश और अपना स्वत्व पहँचानने लग जांय तब तो हमारी स्थिति में बाधा पहुंचेगी।

अस्तु वह सब तो पुरानी दन्त कथा हो गई थी हाल में कर्ज़न महोदय ने बङ्गाल के दो टुकड़े कर मानों उस भूल में रेशम की गट्ठी पर पानी पड़ जाने के समान हो गया। कर्ज़न साहब अपनी पालिटिक प्रवीणता के घमण्ड में यह कभी नहीं समझे थे कि हमारी इस कुटिल नीति का ऐसा बुरा परिणाम होगा बङ्गाली जो केवल बक २ करना जानते हैं क्या इतना ज़ोर पकड़ेंगे। अस्तु बङ्गाल को दो टुकड़े करना भूल समझ प्रजा के आन्दोलन पर फिर उसे एक कर देना था पर सो कैसे हो सकता है। अपनी भूल पर पछताना, Yield-किये हुये को त्यागना, तो वे जानते ही नहीं। अमेरिका ऐसा भारी देश खो बैठे पर अपनी ज़िद्द नछोड़ा। "सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्द्धं त्यजति पण्डितः" वाली नीति को ये पण्डिताई नहीं बल्कि मूर्खता मानते हैं। दूसरे पृथ्वी मण्डल भर में अनुपम इस स्वर्ण खण्ड पर इनका दांत बूड़ गया है इस कामधेनु को जहां तक हो सके दुहते चले जांय धेनु के दुर्बल बछड़ों को उस दूध से जैसे बने वैसे महरूम रक्खें। इसी के अनुसार बहुत दिनों तक झूंठी उम्मेद और दिलासों ही में रक्खा अब डाट डपट और लाल पीली आंख दिखला अपना स्वार्थ निकाला चाहते हैं पर हम से चूक पर चूक होती गई और हो रही है सो कभी स्वीकार न करैंगे।

कमंडल में मंडल।

लेखक—ठाकुर सूर्यकुमार वर्मा

सर्वे यत्र विनेतारः सर्वे पंडित मानिनः।
सर्वे महत्वमिच्छन्ति तद्वृन्दमवसीदति॥

जिस देश के लोग अपनी मर्यादा त्याग करनी अकरनी सब कुछ करते हैं उस देश का अवश्य अधःपात हो जाता है। उपरोक्त श्लोक में कवि ने ठीक कहा है कि जहां सब ही नेता हैं, सब लोग अपने को पंडित समझते हैं, और सब लोग अपनी अपनी बड़ाई की इच्छा करते हैं वह समूह अवश्य दुःख भोगता है। यही दशा आज कल हमारे देश की हो रही है। जिसे देखो वही देश के दस पांच आदमियों की सहानुभूति प्राप्त करके नेता और प्रतिनिधि बन जाता है। एक वह समय था कि देश का सच्चा भक्त और नेता बनने के लिए लोगों को अपना तन, मन, धन, सर्वस्व अर्पण करना पड़ता था, देशभक्त ही सच्चा राजभक्त बन सकता था; परन्तु आज कल समय बड़ा विलक्षण है। देश चाहे रसातल के और भी नीचे चला जाय, देशवासी चाहे एक एक दाने को तबाह हों, भाई भाई का प्राण लेने को उतारू रहेगा। कहां तक कहें अपने घर की स्त्रियों तक को राजपाट की अतुल सामिग्री रहते भी चाहे एक छदाम न दें और वे व्याकुल होकर अन्य पुरुषों का मुख ताकती फिरें परन्तु राजभक्ति के मद में चूर हां हज़ूर हां हज़ूर कहने को सदा तय्यार रहेंगे। गतवर्ष भारतवासियों को उद्दण्ड हाकिमों की कृपा से बहुत कुछ कष्ट पहुंचे। उन्हीं कष्टों को निवारण करने के लिए भारत की प्रजा जो बहुत दिनों से घोर निद्रा में सो रही थी जाग उठी और देखा कि श्रीमान् सप्तम एडवर्ड की सरल और सीधी साधी प्रजा पर उनके कुछ नौकर अत्याचार कर रहे हैं। अतएव अत्याचारों से बचने के लिए लोगों ने पुकार मचाई। प्रजा क्यों पुकार रही है इस पर तो कुछ ध्यान न दिया गया; स्वार्थी लोगों की झूठी रिपोर्टों से ही यह अनुमान कर लिया कि

भारत में शीघ्र ही बलवा होने वाला है। बस इसी घबराहट में दो एक देशभक्तों को देश निष्काशन का दंड दिया गया। कई एक प्रतिष्ठित पुरुषों को कई मास तक हवालात में डाल सड़ाया और बहुतो कों कठिन कारागृह वास का दंड देकर जेल में नाना प्रकार की यातनायें पहुंचाई गई। इस अवसर को ग़नीमत जान, पदवी दान पाने वालों ने भी अपना मतलब बनाया। बरसों ख़ुशामद करते डाली पहुचाते और हां हजूर हां हजूर कहते तब कहीं एंग्लो-इण्डियन देवता प्रसन्न होते थे और पदवी दान मिलता था। परन्तु इस समय पर तो केवल राजभक्ति, राजभक्ति का शब्द उच्चारण करने से ही पुरस्कार और पदवियों का ढेर प्राप्त हो जाने की सम्भावना थी। अतएव 'शुभस्य शीघ्रम्' के अनुसार राजभक्ति का सहारा लेकर भिन्न२ जाति और सम्प्रदाय के लोग अपनी अपनी जाति धर्म और सम्प्रदाय के प्रतिनिधि बन कर गवर्मेंट की सेवा में उपस्थित हुए और देशभक्त, देश हितैषियों को गवर्मेंट का शत्रु बतला कर उन्होंने अपने तईं राजभक्त प्रगट किया। गवर्मेंट झूंठे समाचारों से भयभीत हो ही रही थी कि इतने में इन पदवी दान देने वालों को पाकर बड़ी प्रसन्न हुई। 'डूबते को तिनके का सहारा होता है' यही दशा गवर्मेंट की हुई। सिक्ख, राजपूत, तालुक़ेदार और हमारे मुसलमान भाई सबों ने अपनी अपनी बारी से राजभक्ति का सहारा ले गवर्मेंट को प्रसन्न किया और अपने लिए पदवी दान पाने का रास्ता साफ़ कर लिया। सब लोग तो बाज़ी मार ले गये परन्तु भारत का स्तम्भ धर्म महामंडल अपने कमण्डल में ही मग्न था कि अचानक उसे भी राजभक्ति की सुधि आई। कृष्णभक्ति, शिवभक्ति, भगवानभक्ति इत्यादि से अपनी तृप्ति होती न देख उसने राजभक्ति का सहारा लिया। मंडल अपने कमंडल को फोड़ कर बाहर आया और आते ही बड़े लाट के दर्शन किये। मंडल के प्रतिनिधियों ने बड़े लाट से जाकर जो कुछ कहा उसका सार यह है। 'वृटिश राज्य में हम लोगों को धार्मिक स्वतंत्रता प्राप्त है। गवर्मेंट शिक्षा के प्रचार का खूब ही उद्योग कर रही है। हमारे उपदेशक घूम घम

देश में धर्म शिक्षा प्रचार कर रहे हैं और हम सच्चे राजभक्त हैं'। भारत धर्म महामंडल के प्रतिनिधि गण लाट साहब से मांगते क्या हैं? केवल यह कि सनातन धर्मी हिंदुओं के लिए समस्त स्कूलों और कालिजों में महामंडल द्वारा धार्मिक शिक्षा की व्यवस्था की जाय !

पाठकगण ! भारत धर्म महामंडल के नेताओं ने अपने द्वारा स्कूल और कालिजों में धार्मिक शिक्षा दिए जाने की आज्ञा मांगी। यदि हमारी स्मरणशक्ति हमें धोखा नहीं देती तो हम कह सकते हैं कि बहुत दिन हुए गवर्मेंट ने इस विषय में आज्ञा दे रक्खी है कि जिस समुदाय के लोग अपने बालकों को धार्मिक शिक्षा देना चाहें वे अपना प्रबंध स्कूल और कालिजों में कर सकते हैं। लड़कों को घंटे आध घंटे का समय इसके लिए दिया जाया करेगा कि वे स्कूलों में ही धार्मिक शिक्षा प्राप्त कर सकें। यदि महामंडल के अधिकारी इस बात को जानना चाहें तो वे शिक्षा विभाग के डाइरेक्टर से इस विषय में लिखा पढ़ी करके जान सकते हैं। फिर जब भारत धर्म मंडल में स्वतंत्र नृपतिगण, उच्च-कर्मचारी और धनी नामी पुरुष संयुक्त हैं तब क्या मंडल हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए देश में धार्मिक शिक्षा का प्रबन्ध नहीं कर सकता? परन्तु उसे तो जाकर लाट साहब के सम्मुख खुशामद के साथ साथ कुछ कहना था। क्या धर्म महामंडल का यह कर्तव्य नहीं था कि वह लाट साहब से कहता कि इस घोर अकाल में हिन्दू बालकों की रक्षा कीजिये? जिस हिन्दू धर्म में, गो ब्राह्मण की रक्षा करना परम धर्म माना गया है उसी माननीय गऊ माता की गर्दन पर नित्य कसाइयों की छुरी चलती है क्या मंडल लाट साहब से गो बध बन्द करने के लिए विनय नहीं कर सकता था? विदेशी अपवित्र चीनी के देश में आने से हिन्दू धर्म नष्ट भ्रष्ट हो रहा है वह देश में न लाई जाय, क्या हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए इस विषय पर लाट साहब से नहीं कहा जा सकता था। परन्तु जब गाय के मांस से गोरों की उदर दरी भरी जाती है, विदेशी चीनी के प्रचार से अंगरेज़ व्यापारियों का घर भरता है, तब भला इस प्रकार की बातें कह अपने

प्रभु को अप्रसन्न कर अपने स्वार्थ में बाधा डालने की कौन मूर्ख चेष्टा करेगा ? राजभक्ति की ढाल लेकर गवर्मेंट का मनोरंजन करने के लिए पदवी पाने की अभिलाषा से जो लोग जाते हैं वे भला देश की भलाई की सच्ची बात अथवा हिन्दूधर्म को नष्ट होने से बचाने के लिए कोई ऐसी बात जिससे उनके कर्ता, धर्ता विधाता, अप्रसन्न हों कब कह सकते हैं ? गवर्मेंट को एक तो यों हीं एंग्लो-इंडियन देवताओं की कृपा से भारतवासियों की सच्ची दशा का ज्ञान नहीं होने पाता दूसरे इन पदवी पाने के भूखे लोगों के कारण जो देश के शत्रु हैं और भी हमारी सच्ची दशा को गवर्मेंट नहीं जान पाती। हज़ारों आदमी नित्य प्लेग के कारण कराल काल के गाल में चले जा रहे हैं, हज़ारों अन्न,वस्त्र न मिलने के कारण तंग और भूखे अपने प्राणों को तड़प तड़प कर त्याग रहे हैं परन्तु उनकी ओर इस मंडल का ध्यान कभी आकर्षित नहीं हुआ। देशवासियों के मांस रहित अस्थि शेष शरीर को देख कर मंडल के नेताओं का कभी कलेजा नहीं पिघला। कलेजा पिघला भी तो राजभक्ति के लिए ! अब मंडल के नेताओं के हृदय में गो ब्राह्मण भक्ति के बजाय राजभक्ति ने स्थान पाया है ! हम राजभक्ति को बुरा नहीं समझते। राजभक्ति करना हमारे सनातन हिन्दू धर्म का मुख्य अंग है। परन्तु जो राजा हमारे धर्म की रक्षा नहीं करता, धर्म कार्य करने में हमें सहायता नहीं पहुंचाता, उसके प्रति सच्ची भक्ति हमारे हृदय में कैसे उत्पन्न हो सकती है। हां, इस समय अंगरेज़ लोग विद्या, बुद्धि और बल में हम से बड़े हैं और इसी कारण हमारे ऊपर राज्य कर रहे हैं परन्तु उनके प्रति हमारे हृदय में सच्ची भक्ति तभी स्थिर रह सकती है जब वे हमारे धर्म की रक्षा करें। हमारे यहां धर्मशास्त्र में लिखा भी है:-

मोहाद्राजा स्वराष्ट्रं यः कर्षयत्यनवेक्षया।
सोऽचिराद्भ्रश्यते राज्या ज्जीविताच्च सवान्धवः॥
शरीरं कर्षणात्प्राणाः क्षीयन्ते प्राणिनां यथा।
तथा राज्ञा मपि प्राणाः क्षीयन्ते राष्ट्र कर्षणात्॥

जो राजा स्वार्थ में फँसकर अपने शासित मनुष्यों को शास्त्र निषिद्ध क्रम पर प्रजा से धन बटोरता है अथवा मारने आदि कष्टों से पीड़ा पहुंचाता है वह शीघ्र ही प्रजा के कोप और अधर्म युक्त राज्य करने से पुत्रादि सहित नष्ट भ्रष्ट हो जाता है। जिस प्रकार आहारादि के रोकने से शरीर सूख जाता है और प्राण क्षीण हो जाते हैं उसी प्रकार राजाओं को भी अपने राज्य की प्रजा को पीड़ा पहुचाने से प्रजा के असन्तोष से राजा अपने राज्य से च्युत हो जाता है। अतएव राजा को अपने शरीर के समान ही अपने देश और अपनी प्रजा की रक्षा करनी चाहिए। वर्तमान समय में राजा के द्वारा हमारी रक्षा क्या हो रही है इसे भी सुनिए। हज़ारों आदमी अन्न के मारे बिलबिला कर अपने प्राण छोड़ रहे हैं। देश में घोर अकाल पड़ रहा है परन्तु गोरे व्यापारी अपने स्वार्थ के कारण इस देश के अन्न को विदेश ढोए लिये जा रहे हैं॥ गत मास में ही कई लाख मन अन्न विदेश गया है। ऐसे कठिन समय में अन्न विदेश से यहां आना चाहिये अथवा जाना चाहिये इस बात का निर्णय पक्षपात और स्वार्थ की ऐनक को उतार कर हमारे देश के पदवी पाने के इच्छुक और हमारे प्रभु दोनों करलें। इस के अतिरिक्त देश में गोवध होने के कारण हल जोतने के लिए बैलों का मिलना कठिन हो गया है। जो बैल पहले दस रुपया में आसानी से मिल सकता था वह अब चालीस पचास में भी कठिनता से मिलता है। क्या राजा का यह कर्तव्य नहीं है कि वह इस अन्याय को रोक कर देश दशा सुधारने में सहायक हो? राजभक्ति का नक़्क़ारा बजाया जाय तो क्या 'उघरहिं अन्त न होहि निबाहू' की कहावत चरितार्थ न होगी। जिस धर्म और जाति की पवित्र इमारत जर्जर हो रही है उसकी रक्षा का उपाय न करके कोरी राजभक्ति का डंका पीटने से क्या कभी कल्याण हो सकता है? राजा की प्रजा को प्रसन्न करना ही सच्ची राजभक्ति है। हमें यहां पर राजभक्त सेवकों से केवल एक ही बात और कहना है कि हमको श्रीमान् महाराज सप्तम एडवर्ड के भक्त होना चाहिये अथवा उनके चाकरों के या अंग्रेज़ मात्र के भक्त बनने की आवश्यकता

होकर प्रजा पुकार मचावे तो आश्चर्य ही क्या है? हम देखते हैं कि बहुधा कर्मचारी हमारे ऊपर मनमाना अत्याचार करते हैं परन्तु ज्योंहीं हम अपनी ज़बान बाहर निकालते हैं त्योंहीं हम राज-विद्रोही कह कर पकड़ लिए जाते हैं और कठिन से कठिन दुर्दशा भोगते हैं। यहां तक कि यदि हम किसी गोरे अथवा अधगोरे के अन्याय और अत्याचार का समाचार गवर्मेंट की सेवा में लेकर जाते हैं तो भी हमारी गणना राजविद्रोहियों में की जाती है। इस कारण हम यह नहीं समझ सकते कि हम श्रीमान् सप्तम एडवर्ड की प्रजा हैं अथवा उनके नौकरों या अंगरेज़ जाति मात्र के हम दास हैं? यदि अत्याचारी के अत्याचार को भी रोकना राजविद्रोह है तो फिर भारतवासी राजविद्रोह के पंजे से किसी प्रकार बच नहीं सकते! भारत के समान विलक्षण शासन की प्रणाली देखने, की कौन कहे सुनने अथवा पढ़ने में भी नहीं आई। जिस देश का शासन ऊंचे से लेकर नीचे तक नौकरों द्वारा होता है उसकी दुर्दशा का ठिकाना क्या? भारत सचिव से लेकर वायसराय और कलक्टर तथा पुलिस का एक प्यून तक सब ही हमारे राजा हैं। नौकर ही आज्ञा देता है और नौकर ही आज्ञा पालन करता है; कैसा अद्भुत शासन है? राजा द्वारा देश का शासन सुना गया था, प्रजा द्वारा देश का शासन होता है यह भी सुना है;,परन्तु नौकरों द्वारा राजशासन होता है यह बात केवल इसी देश में देखी जाती है। इसी कारण नौकरों के अत्याचार से पीड़ित होने से जब प्रजा पुकार मचाती है तब वे अप्रसन्न हो जाते हैं और तुरन्त देश देशान्तरों में यह समाचार फैल जाता कि भारत की प्रजा राजविद्रोह फैलाना चाहती है। परन्तु भारत की भीतरी दशा देखी जाय तो राजविद्रोह का चिन्ह तक नहीं पाया जाता। गत वर्ष जिस विद्रोह की सूचना विलायत भेजी गई थी उसका सच्चा समाचार पार्लिया-मेंट के कई एक मेम्बर अपनी आखों देख गए हैं और उन्होंने विला-यत वासियों को सच्चा समाचार बता कर उनके भय को दूर किया है।

अन्त में हम अपने राजभक्ति के मद में मतवाले धर्म मंडल, तथा अन्य सभा समाज के नेताओं, सेठ साहूकारों और राजा महाराजाओं से जो केवल पदवी दान पाने के भूखे हैं सविनय प्रार्थना करते हैं कि वे अन्य प्रकार से एङ्गलो-इंडियन देवताओं को प्रसन्न करके पदवी दान प्राप्त करें। देशभक्तों को बदनाम करके राजभक्ति की ओट में शिकार न खेलें और देश की उन्नति के कार्य में बाधा न डालें। भारतीय प्रजा जो आज कल घोर निद्रा से जाग उठी है उसे देश का कार्य करने दें। उसके उन्नति के मार्ग में कांटे न बोवें।

हिन्दी प्रदीप—हम तो बहुत दिनो से ते कर चुके हैं कि यह मंडल भी एक मस्तक का शूल है। महा दांभिकों का दल परदे की आड़ में शिकार कर रहा है इससे देश रसातल में न धसै इसी को गुनीमत समझो! इससे कुछ उपकार की आशा करना केवल मृग तृष्णा है।

कौलीन्य।

कुलीनता क्या है सो हम पीछे दिखावेंगे संप्रति यह दिखलाते है कि मनुष्य कुलीनों की श्रेणी से क्योंकर गिरजाता है मनुने कहा है:—

"कुविवाहैः क्रिया लोपैर्वेदानध्ययनेन च।
कुलान्यकुलतां यान्ति ब्राह्मणातिक्रमेण च ॥"

नीच कुलमें विवाह से, संस्कारों के न होने से, वेद आदि विद्या न पढ़ने से, ब्राह्मणों का तिरस्कार करने से, ऊंचाकुल भी नीचा हो जाता है। यह तो हई है पर अभी तक "धनेन कुलम्" यही माना जाता है। रुपया होने से नीचा से नीचा कुल भी कुलीन मान लिया जाता है। परन्तु अब थोड़े घने पढ़े लिखे "चरित्रेण कुलम्" मानने लगे हैं। उचित मालूम होता है कि कुलीनता की परख में चरित्र की कसौटी से बढ़ कर धन तथा विद्या नहीं होसकती। बहुधा ऐसा भी देखा गया है कि धनके मद में मदोन्मत्तों का कुल रुपया निकल जाने से फिर न जानिये कहां बिलाय गया उनके कुलीनता की टिर्र बिल्कुल छार में

मिल गई उस बनावटी कुल का छोर हो गया पर चरित्रवान् कुलीन का चरित्र के साथ कुल का कुछ ऐसा घनिष्ट संबन्ध रहा है कि चरित्रवान् कुलीन न हो ऐसा बहुत कम देखा गया है। कसौटी के समय सच्चा कुलीन वही निकलैगा जो चरित्र संपन्न है और चरित्रवान् अवश्यही कुलीन भी होगा। सच तो यह है कि चरित्रवान् के माथे पर कोई टिकट नहीं लगा रहता जो प्रगट करै कि यह चरित्र संपन्न है चरित्र आदमी का उसके वर्तावं से नमूद होता है। बहुधा नीच कुल वालों में ऐसे २ चरित्रवान् पाये गये हैं कि बड़े २ उच्च कुल वाले कसौटी के समय उसके मुक़ाबिले शरमा गये हैं और वह चरित्र पालन के अपने दृढ़ सिद्धान्त से नहीं डिगा। परिणाम में वह नीच कुल वाला कुलीनों की श्रेणी में शामिल कर लिया गया। तो सिद्ध हुआ यह कुलीनता केवल चरित्र पर निर्भर है। कहावत है "असिल से खतरा नहीं कमअसिल से बफा नहीं" जो शुद्ध रजवीर्य के हैं उन से गलती या बुराई की बहुधा कम संभावना रहती है जो ऐसे हैं कि "मा पिलंगिनी बाप पिलंग तिनके लड़के रंगबिरंग" ऐसों से भलाई की कुछ आशा रखना भी भूल है। भगवद्गीता का वाक्य है।

"उत्साद्यन्ते जातिधर्माः कुलधर्माश्चशाश्वताः।
उत्सन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन॥
नरके नियतं वासो भवतीत्यनुसुश्रुम।"

वरण संकर पैदा करने वाले कुलघालक होते हैं इसलिए कि जो औलाद पैदा होती है वह अपने जाति का परंपरा गत सनातन धर्म और कुल धर्म अर्थात् अपने कुल की रीति नीति का क्रम सब बिगाड़ डालती है। अपने कुलधर्म को त्यागने वाले या बिगाड़ने वालों को अवश्य नरकवास होता है। इसी बुनियाद पर कदाचित् मनु ने भी ऐसा लिखा है।

"शूद्रावेदी पतत्यत्रे रुतथ्यतनयस्यच।
शौनकस्य सुतोतपत्या तदपत्यतया भृगोः"

अत्रि का मत है कि ब्राह्मण शूद्रा स्त्री का साथ कर पतित हो जाता है उतथ्य तनय वृहस्पति का भी यही मत है। शौनक कहते हैं संसर्ग मात्र से नहीं वरन उसमें पुत्र पैदा होने से ब्राह्मण पतित होता है। भृगु का मत है तब तक भी उसका ब्राह्मणत्व नहीं जाता जब पुत्र के भी पुत्र हुआ तब वह ब्राह्मण फिर ब्राह्मण न रहा अर्थात् तब वह मानो वर्ण शंकर कुल का स्थापित करने वाला होगया और ब्राह्मणता या क्षत्रियता उसमें से सर्वथा सिधार गई। सच तो यों है कि कुलीनता चरित्र ही की बुनियाद पर क़ायम हुई है कुल के आदि पुरुष बड़े ही सच्चरित्र और ऋषि तुल्य जीवन के थे उनके वंशज कुलीन कहलाये। कभी कई पीढ़ी तक उस तपस्वी आदि पुरुष की स्थापित मर्यादा कुल में बराबर बनी रहती है औलाद में कोई २ उस मर्यादा को अपने पवित्र चरित्र से बढ़ा देते हैं ऐसे लोग कुल भूषण या कुल दीपक कहे जाते हैं। किसी कुपुत्र ने उस मर्यादा को अपने घिनौने बर्ताव से हटा दिया तो वह कुल पांसन कुलाङ्गार और कुल का कुठार कहा जाता है। पर कुलीनता की ऐंठन कुछ न कुछ उसमें भी अवश्य रहती ही है। यह ऐंठन एक प्रकार समाज के लिए तो हानिकारक है पर उस पुरुष विशेष को लाभदायक ज़रूर है। इसलिए कि उस ऐंठन के सबब कुचरित्र से कुचरित्र भी अपने निन्दित घिनौने काम से कभी को पछताता हुआ घिनोने काम से बचता है और अपने कुलका ख्याल कर पूर्वजों के सदृश होने की चेष्टा करता है। कुलीन से संसार के उपकार की जितनी सम्भावना रहती है उतनी ही नीच कुल वाले से हानि की। विलायत में जब तक की कंपटीटिव सिविल सरविस" की प्रथा नहीं निकली थी तब तक जो हाकिम यहां आते थे कुलीन घराने के होते थे अब इस प्रथा के निकलने से जो हमारे शासक नियत होकर आते हैं सो जिस क्रम के होते हैं प्रगट है। कोई महीना खाली नहीं बीतता कि पत्रों में ऐसों की करतूत न छपती हो और संपादकों को अपनी लेखनी को दौड़ाने के लिए मैदान न मिल जाता हो तस्मात् कौलीन्य सर्वथा भला है यदि उसके काम का पालन हो सके।

ईश्वर से विनय ।

सह रहा बज्र आघात हुआ आरत है ।
जगदीश तुम्हारी शरन दीन भारत है ॥ टेक ॥
हे विश्वम्भर तुम्हीं विश्व उपजाया ।
फिर क्यों भारत से तुमने नेह घटाया ॥
अति मोह जाल में फँसा ख़ूब भटकाया ।
दुख नहीं किसी ने इसका तनक बँटाया ॥
यह प्लेग दुष्ट नित लाखन नर मारत है ।
जगदीश तुम्हारी शरन दीन भारत है ॥ १ ॥
जिस समय दुष्ट यह प्लेग जहां जाता है ।
फिर वहां प्रेम जड़ सहित नाश पाता है ॥
सब तजें परस्पर मेल घटै नाता है ।
नहिं कोइ किसी के पास तहां आता है ॥
ये मिले जन्म के पल में मन फारत है ॥
जगदीश तुम्हारी शरन दीन भारत है ॥ २ ॥
अब पड़ा हाय दुर्भिक्ष वृष्टि बिनु भारी ।
चहुंओर कुलाहल करें दुखी नर नारी ॥
ये नई बिपति पै बिपति हाय क्यों डारी ॥
सब अन्न भेजि परदेश सुखी ब्यौपारी ॥
दिन दिन यह पापी घोर रूप धारत है ।
जगदीश तुम्हारी शरन दीन भारत है ॥ ३ ॥
बिनु अन्न पेड़ की छाल पीस खाते हैं ।
दिन रात परिश्रम करें न सुख पाते हैं ॥
अंन्न २ करि हाय ! प्राण जाते हैं ।
नहिं तौभी इधर धनवान ध्यान लाते हैं ॥
नहिं कोई बँधावै धीर पीर टारत है ।
जगदीश तुम्हारी शरन दीन भारत है ॥ ४ ॥
सब साग अलौना खाय उदर भरते हैं ।

इस घोर शीत में वस्त्र हीन फिरते हैं ॥
निशि ताप २ संताप सहा करते हैं।
सब तलफ़ २ बे मौत हाय! मरते हैं॥
यह देखि दीन दुर्दशा हियो हारत है।
जगदीश तुम्हारी शरन दीन भारत है॥ ५॥
सब युवा बाल और वृद्ध दीन गोहरावैं।
नित कोटिन संकट सहैं चैन नहिं पावैं॥
नहिं विष भी सस्ता मिलै खाय सो जावैं।
इस शीत क्षुधा से कैसे प्राण बचावैं॥
यह हाय! दुष्ट दुर्भिक्ष प्रलय डारत है।
जगदीश तुम्हारी शरन दीन भारत है॥ ६॥
प्रभु सदा आप हो धेनु विप्र रखवारे।
तुम दीन बंधु दुख दीन जनों के टारे॥
किस घोर पाप से तुमने हाय! बिसारे।
बिनु कृपा आपकी भटकैं दीन बिचारे॥
यह काल व्याल बन दुख में विष झारत है।
जगदीश तुम्हारी शरन दीन भारत है॥ ७॥
प्रभु आप जगत पति क्षमा पाप सब कीजै।
अब डूबत हैं मझधार बांह गहि लीजै॥
दुख बहुत दिनों से सहा अभय कर दीजै।
यह सब से प्यारा देश तुम्हारा छीजै॥
छेदा लाल प्रभू तुम पर सब वारत है।
जगदीश तुम्हारी शरन दीन भारत है॥ ८॥

कबित्त।

फेरिधों सनाथ होय भारतनिवासी दीन,
आलस की नींद बैर खोय हैं न खोय हैं।
होय के सचेत निज दुर्दशा विचारि कभी,
द्वेष मैल अंतर सो धोय हैं न धोय हैं॥

तुच्छदास त्यागि मृगतृष्णा की आशा निज;
　　पौरुष की बेलि कभी बोय हैं न बोय हैं ।
पाय के स्वतंत्र सुख कष्ट को बिताय कभी,
　　चैन सों पसारि पांव सोय हैं न सोय हैं ॥ १ ॥
शरन हैं तुम्हारी सुधि भूले क्यों हमारी दुख,
　　रैनि दिन भारी टुक ध्यान इत लाइये ।
आप ही बचैया कोई पास ना खिवैया यह,
　　डूबति है नैया प्रभु पार तो लगाइये ॥
कहै तुच्छदास प्रभु दीनन को हरौ त्रास,
　　सुमति को विकास करि कुमति को नसाइये ।
बार २ नाय माथ टेरत हैं अनाथ दीन,
　　करिके सनाथ प्रभु हांथ तो गहाइये ॥ २ ॥
मीन ज्यों बिहीन जल दीन से कुलीन भये,
　　व्याकुल मलीन छीन वस्त्रहीन गात हैं ।
दांत काढ़ि बात करें आंत में न अन्न जात,
　　पात छाय पांति २ साग बैठि खात हैं ॥
जाड़े में उघारे गिन तारे हा सकारे करें,
　　लाखन दुखारे बादि प्यारे प्राग जात हैं ।
पास पास घास के बिछौना पै उदास पड़े,
　　लम्बे उसास लै पतौआ चबात हैं ॥ ३ ॥

छेदालाल ।

सूरत की बेडौल सूरत ।

द्वितीय दृश्य का दूसरा गर्भांक

स्थान—सुरेन्द्र के कैम्प की प्रान्त भूमि—दो वालंटियरों का प्रवेश—

पहिला—दोस्त कहो क्या ते पाया— पहले यह तो बतलाओ तुम किस पार्टी के हो—माडरेट या एक्सट्रीमिस्ट ।

दूसरा–मैं दोनों में कोई नहीं हूं और दोनों में हूं। तुमने मसल सुना होगा "जहां देखैं हंडा परात तहां गावैं सारी रात" मैं टाइम सरबर होना सब से अच्छा समझता हूं मुझे तो यह सब दिल बहलाव है। आप जानते हो मेरा नाम उलूकचन्द है मैं दोनों को काठ का उल्लू बनाया चाहता हूं।

प०–तेरा तो नाम ही उलूकचन्द है तब तो ठीक है "यथा नामस्तथागुणः" तो तुम कांग्रेस को निरा तमाशा समझते हो?

दू–और नहीं क्या तुम्हीं बतलाओ २२ वर्ष कांग्रेस हुई क्या फल सिद्ध हुआ।

प०–अलबत्ता जो ढंग कांग्रेस का अब तक रहा उससे तो गोरे कर्मचारियों की खुशामद के सिवाय देश की वास्तविक भलाई का एक भी तत्व न निकला। भिक्षा मांगने वाले अन्त को भिखारी के भिखारी–भिखारी को धनी पात्र होते कभी किसी ने देखा सुना न होगा। हौसिला तो स्वराज का और मांगना भीख। इसी से तिलक महाराज इसका ढंग बदलना चाहते हैं। वे अपने यत्न में जो कृतकार्य हुये तो देखना कांग्रेस की सूरत ही पलट जायगी इसके मन्तव्य और काररवाइयां स्वराज में मूल मंत्र होंगे।

दू–घामड़चन्द्र तुम कुछ जानते हो ऐसे २ लाख तिलक तीन बार जन्म लें तौभी कुछ नहीं कर सक्के एक चने ने कभी भार फोड़ा है। मेहता गोखले सरीखे राजनीति विशारद के आगे तिलक को कौन पूछता है इस समय जितने बड़े लोग सबों के ये सिरताज हैं माननीत ज्ञानी मानी सबों के नेता हैं सब लोग इन्हीं के अनुसार चल रहे हैं तब तिलक किस गिनती में रहे।

प०–नहीं मालूम तुम किस खोह में छिपे बैठे रहते हो Politics of the day वर्तमान राजनैतिक आन्दोलन का रंग ढंग क्या है कुछ नहीं जानते। हमारे होनहार नवयुवक मेहता के नाम से चिढ़ते हैं तब उनके सिद्धान्तों से सहमत होना तो दूर रहा। तिलक के सर्वमान्य होने का यही हेतु है कि सुशिक्षित नवयुवक सब इनके अनुयायी हैं।

तिलक महाराज सुरेन्द्र बाबू को साथ लिये इधरही आ रहे हैं तो चलो हम लोग भी अपने २ काम में लगें (दोनों गये)।

सुरेन्द्र—आपका क्या अभिप्राय है सो मैं लालाजी से सुन चुका हूं—आपका कथन सर्वथा उपयुक्त है मैं मानता हूं।

तिलक—मैं चाहता हूं आपस का विरोध न बढ़ने पावे—निरन्तर इस चिन्ता में हूं कि कांग्रेस न रुकने पावे।

सु०—मिलाप मैं करा दूंगा आप निश्चिन्त हो रहिये—पर मालवी से अपनी गरज़ एक वार कह रखिये!

ति०—भेजा है संवाद यदि अवकाश हो उनको—पांच मिनट के लिये यहीं आ जावें मिटे द्विविधा मन को।

(एक वालंटियर का प्रवेश) मालवी फरमाते हैं मैं नित्य क्रिया में निरत हूं अवकाश नेक नहीं देवार्चन में तत्पर हूं।

सु०—वेश आप जांय अब मैं ठीक कर लूंगा जहां तक सम्भव है संदेशा जल्द भेज दूंगा।

ति०—(स्वगत) जान गये यह बेल मड़ये चढ़ने वाली नहीं मालूम होती लाचारी ईश्वरेच्छा (प्रकाश) अच्छा तो मैं आपके विश्वास पर हूं जहां तक हो काम बिगड़ने न पावे (दोनों गये)।

तीसरा गर्भांक।

स्थान— कानग्रेस पण्डाल

भारत वीराङ्गनाओं का मंगलाचार गान-पानी की कुछ कमी नहीं है हरियाली लहलहाती है। इत्यादि स्वागतकारिणी कमेटी के सभापति त्रिभुवननाथ मालवीय की वक्तृता।

सज्जनो भ्रातृगण और वीराङ्गना भगिनियो महिलागण! मंगल मूरत आप लोगों के शुभ आगमन से हम सब सूरतवाले दिल की कुल कुद्रत दूरबहाय सच्चे जीसे आपसे निवेदन करते हैं आशा है इसे आप अपने करण कुहर की कोठरी में बन्द न रख हमारे इस कथन को कहीं से

किसी अंश में झूठ न मानोगे । हमारे कई एक माननीय महापुरुषों की प्रेरणा से जब नागपूर के रौडीज़ कांग्रेस में बाधा डालने में सब तरह उद्यत हो गये (सब ओर से नो नो) और यह मालूम हुआ कि कांग्रेस अब सदा के लिये टूटा चाहती है २२ वर्ष का पाला पोषा पौधा अब उखड़ा चाहता है । तब हमारे बम्बई के राजा श्रीमान् सर फीरोज़शाह मेहता ने इसका भार अपने ऊपर लिया । आपको शायद यह बात न मालूम हो तो जान रखिये कि हम सब लोग मेहता साहब की क्रीड के पैरोकार हैं जो कुछ वे मंजूर करैं उसे हम सबों को मानना ही पड़ता है । बम्बई में जब यह तै पाया कि इस वर्ष कांग्रेस का अधिवेशन सूरत में होगा तब केवल एक महीना रह गया था। ऐसे थोड़े अरसे में जो कुछ बन पड़ा सूरत के उत्साही लोग आपके स्वागत से वहिर्मुख न हुए और न राष्ट्रीय काम में कभी किसी से पीछे हटैंगे । अस्तु आप सब लोगों की राय से आज कांग्रेस के सभासद हमारे सुयोग्य मित्र रास बिहारी घोष होते हैं (सब ओर से नो नो)

अम्बालाल–सुनो सुनो कान लगा कर एकाग्र चित्त हो सुनो । मैं अनुमोदन करता हूं । आज सभा के सभापति रासबिहारी घोष-मेरा है-प्रस्ताव यह घोष बड़े निर्दोष– (नो नो सब ओर से)

सु–दीवान बहादुर की बात मैं अनुमोदन करता हूं मैं साठ वर्ष का हूं मेरी सुफैद डाढ़ी का लिहाज़ आप लोगों को करना ही चाहिये– (सब ओर से नो नो बैठो २ मैं इस अनुमोदन का अवरोधन करता हूं)

सु–(ज़ोर से चिल्ला कर) मैं सभापति की आज्ञा का सहर्ष प्रतिपालन करता हूं ।

(नहीं सुनैंगे–मत बोलो मैं उस आज्ञा का निवारण करता हूं)

सभापति–(धमकी और घुड़की से चिल्ला के) सुनो २ सेत मैं सेशन ख़राब करते हो–व्यर्थ कांग्रेस बदनाम करते हो-नहीं मानोगे तो ख़राब होगे–(सब ओर से) चुप रहो मत बोलो नहीं मानेंगे (सब ओर गुलशोर के साथ पटाक्षेप)

मुरारि और भवभूति

मुरारिपदचिन्ताचेत् भवभूतिं परित्यज।
मुरारिपदचिन्ताचेत् भवभूतिंपरित्यज॥

(मुरारि) भगवान् के पद की चिन्ता रखना चाहते हो तो (भवभूति) संसार की संपत्ति छोड़ो-मुरारि की कविता का रस लिया चाहो तो उनके पदों के आगे भवभूति कवि को छोड़ो-

मुरारिपदचिन्तायां भवभूतेस्तु का कथा।
भवभूतिं परित्यज्य मुरारिमुररीकुरु॥

मुरारि के पद की चिन्ता में संसार की संपत्ति की क्या गिनती है संसार की संपत्ति त्याग मुरारि को अंगीकार करो।

मुरारिपदचिन्ताचेत् तदामा घेरतिंकुरु।
मुरारिपदचिन्ताचेत् तदामाऽघेरतिंकुरु॥

मुरारि के पद की चिन्ता हो तो माघ पढ़ने में रुचि करो-मुरारि के चरण की चिन्ता चाहो तो (अघ) पाप से बचो-

आधुनिक कवि मुरारि की क्लिष्ट कल्पना अनर्घ राघव से विदित है जिस पर भवभूति के मुकाबिले किसी ने इन पद्यों को लिख भवभूति से मुरारि को बढ़ाय माघ कवि को मुरारि के बराबरी का ठहराया है-पद्य तीनों बड़ी चातुरी के हैं और श्लेषपूर्ण हैं।

रिलीफ वर्क्स खोलने का उद्देश्य।

किसी काम को करने का मन में संकल्प करतेही सहज में यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि यह काम क्यों किया जाय? इस प्रकार के प्रश्न सम्बन्धी विचार करने में अंगरेज़ तत्व वेत्ताओं में दो पक्ष हैं। एक पक्ष का कथन है कि बहुत सी बातें मनुष्य को स्वभावतः करनी पड़ती हैं और

मनुष्य की विवेक शक्ति ही उसे उस काम करने की ओर आकर्षित करती है दूसरे पक्ष वालें का कथन है कि जिस काम को करने से लाभ होता है उस काम को करने में मनुष्य का चित्त अवश्य लगता है सच बोलना मन का स्वाभाविक धर्म है। सच बोलना ही अपना कर्तव्य कर्म है मन में इस बात की स्वाभाविक स्फूर्ति होती है अतएव मनुष्य अवश्य सच बोलता है। यह पहिले पक्ष वालों का कथन है। दूसरे पक्ष वाले कहते हैं कि झूठ बोलने की अपेक्षा सच बोलने में अधिक लाभ है। यह बात अनुभव से सिद्ध हो चुकी है इसी कारण मनुष्य अपने लाभ के लिए सच बोलने में प्रवृत्त होता है।

ये दोनो पक्ष अपने यहां भी पाए जाते हैं। मीमांसा और धर्मशास्त्र इत्यादि ग्रंथों में पाया जाता है कि अमुक कर्म का अदृश्य फल है। तात्पर्य यह है कि अमुक कर्म का फल अदृश्य है परन्तु तौभी उसे शास्त्रों की आज्ञा अनुसार करना ही चाहिए परन्तु हम लोगों में दृष्ट फल वादी या लोकायतों के मत का प्रचार कभी अधिक नहीं हुआ। कर्म से प्राप्त होने वाले फल की इच्छा मन में न लाना अपना कर्तव्य कर्म है अतएव उसे करना ही चाहिए इस भाव के अनेक वाक्य "अनाश्रितः कर्म फलम्" इत्यादि वाक्य भगवद्गीता आदि अनेक पवित्र ग्रंथों में पाए जाते हैं और इन वाक्यों का प्रभाव हिन्दू लोगों के मन पर बहुत ही प्रबल है। यह बात उनके धार्मिक और लौकिक आचरणों से भी स्पष्ट है। परन्तु पाश्चिमात्य देश में दृष्ट-फल वादी लोग ही अधिक पाए जाते हैं और इसी मत के अनुरोध से वे कर्म करते हैं। रिलीफ़ का काम खोलने का मुख्य मतलब क्या है इस प्रश्न की विवेचना करते समय उपरोक्त विचारों को ध्यान में अवश्य रखना चाहिए। अन्न के बिना लोग भूखों मरने लगे अतएव उनको अन्न देकर उनके प्राणों की रक्षा करना इस प्रकार की इच्छा मनुष्य के मन में स्वभावतः उत्पन्न होती है। इसी अभिप्राय से लोग ग़रीबों को अन्न दान करते हैं। परन्तु ग़रीबों को अन्न दान देने के कारण मैं बड़ा धर्मात्मा हूं इस बात की लोगों में चर्चा फैले। लोग मेरी स्तुति करें और

यदि ईश्वर है तो उसके यहां मुझे स्वर्ग अथवा सुख प्राप्त हो; इत्यादि अन्न दान से होने वाले अनेक लाभ बहुतों को दिखाई पड़ते हैं और इसी मतलब से वे ग़रीबों को अन्न दान करते हैं। सरकार आजकल जो रिलीफ़ का काम खोल रही है अथवा उसने खोले हैं उसके खोलने का मुख्य उद्देश्य क्या है, इस विषय का प्रश्न मन में सहज ही उत्पन्न होता है। क्या स्वाभाविक दया के कारण ही सरकार ग़रीबों पर दया करती है अथवा किसी गूढ़ अभिप्राय से? पूर्व काल में हमारे राजा महाराजा स्वतंत्र एकव्यक्ति हुआ करते थे इस कारण उनके मन में दया का भाव अथवा स्वाभाविक स्फूर्ति का होना सम्भव था परन्तु आजकल की हमारी सरकार एक बड़े लाट और दो चार उनकी सभा के सभासद मिल कर बनी है। इस प्रकार अनेक व्यक्ति मिलकर बनी हुई सरकार का एक मत होना कठिन है। दस पांच आदमी मिलकर जो सरकार बनी है उसके मन में स्वाभाविक स्फूर्ति होना कठिन काम है। इससे यह प्रगट होता है कि सरकार जो रिलीफ़ वर्क्स खोलती है उसमें उसकी स्वाभाविक स्फुर्ति नहीं है। हम देखते हैं कि अकाल सम्बन्धी जो क़ानून बनाया गया है उसमें एक नियम यह भी है कि रिलीफ़ वर्क्स खोले जावें। इसी नियम के अनुसार रिलीफ़ वर्क्स खोला गया है दया के कारण नहीं। अकाल के लिए जो क़ानून बनाया गया है वह स्वाभाविक दया के कारण बनाया गया है यह कहते नहीं बनता। अमुक काम करने से लाभ है अमुक काम करने से हानि है यही बात सोच कर लाट सभा के सभासद किसी क़ानून का मसविदा तय्यार करते हैं और सरकारी लाभ हानि का अनुमान लगाकर ही वह स्वीकार अथवा अस्वीकार होता है। तब ऐसे क़ानून में लिखे हुए रिलीफ़ काम खोलने का मतलब स्वार्थ के अतिरिक्त और क्या हो सकता है। अकाल क़ानून के अनुसार "दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे। देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्विकं स्मृतम्"। इस वाक्य के अनुसार रिलीफ़ कामों के ऊपर अन्न दान नहीं होता यह बात विश्वास के साथ कह सकते हैं। मन में किसी प्रकार की इच्छा न रख सरकार रिलीफ़ के काम में ख़र्च करती है यह बात कोई विचारवान् पुरुष स्वीकार नहीं कर सकता।

यदि सरकार को रिलीफ़ का काम खोलने से किसी विशेष फल पाने की इच्छा है तो वह काम कौन सा है? जिस सरकार ने बद्रिकाश्रम से लेकर रामेश्वर तक और द्वारिका से लेकर जगन्नाथ तक सारा भारतवर्ष अपने हस्तगत कर रक्खा है। देश भर में वृटिश साम्राज्य रुपी सूर्य की किरणें फैल भारतवासियों की आखों में चका चौंध उत्पन्न कर दी है उस सरकार को अब किस विशेष फल पाने की आकांक्षा है? जब तक राज्य प्राप्त नहीं होता तब तक तो राजा को उस राज्य पाने की चिन्ता रहती है परन्तु राज्य पाने पर उस राज्य को अपने अधिकार में बनाए रखने की चिन्ता सदा बनी रहती है। नवीन राज्य को अपने स्वाधीन करने में राजा लोग न्याय अन्याय नहीं देखते। परन्तु राज्य को अपने अधिकार में कर लेने पर न्याय अन्याय का निरीक्षण करने के निमित्त अदालतें खोली जाती हैं बड़े बड़े जज्ज और न्यायाधीश नियत किए जाते हैं और इसी न्याय शासन के कारण से ही रिलीफ़ का काम खोलने की भी आवश्यकता पड़ी है।

राज्य की रक्षा जिस प्रकार बाहरी शत्रुओं से करनी पड़ती है उसी प्रकार भीतरी शत्रुओं से भी। भूख महा प्रबल और भयंकर शत्रु है। हर एक मनुष्य को भूख लगती है। पेट भरने के साधन न रहने पर इस राक्षसी भूंख द्वारा देश में नाना प्रकार के अनर्थ उत्पन्न होते हैं। अकाल के समय इस राक्षसी भूंख के दांत कितने पैने होते हैं इसका अनुभव सहज ही में हो जाता है। यदि एक एक मनुष्य के भूंख का हिसाब लगाया जाय तो वह इतनी भयंकर नहीं दिखाई देती। परन्तु जब सैकड़ों, हज़ारों, लाखों बुभुक्षित लोगों की भूख एकत्रित दिखी जाती है तब उस का उग्र, असह्य और भयंकर स्वरूप प्रत्यक्ष दैत्य अथवा दानव के समान दिखाई पड़ने लगता है। हज़ारों लाखों मनुष्य जिनकी आखें बैठ गई हैं। जिनके शरीर में मांस और रक्त नाम मात्र बच रहा है। जिनकी एक एक हड्डी दूर से दिखाई पड़ती है। गालों के बैठ जाने से जिनके दांत बाहर निकल आए हैं। हाथों और पैरों के नख बढ़े हुए हैं। कमर झुक

गई है, हाथ पैर सूख सूखी लकड़ी के समान हो गए हैं, जिनके पास अपना तन ढाकने के लिए एक हाथ भर कपड़ा तक नहीं है, न पानी पीने के लिए कोई बरतन। ऐसी विकराल मूर्ति को देखते ही राजा लोग थर थर कांपने लगते हैं। उनको भय उत्पन्न हो जाता है कि येही लोग यथार्थ में राक्षस हैं। जब किसी धनाढ्य पुरुष को वे लोग जाकर घेर लेते हैं तब उस के प्राण सूख जाते हैं और उसे अपनी मृत्यु सन्मुख दिखाई पड़ती है। कौन मूर्ख होगा जो ऐसे भयंकर राक्षसों से अपना पीछा छुड़ाना न चाहता होगा। मुट्ठी भर चना देकर यदि स्वर्ण जटित सिंहासन की रक्षा होती हो तो उसे कौन अविवेकी अपने हाथ से जाने देगा? जहां एक बूंद अमृत देकर शत्रु मारा जा सके वहां विष देने से क्या लाभ? यही सब ख़याल हमारी विचार शील सरकार के हुए होंगे।

यदि यह विचार न होता तो क्या देश में इस प्रकार भयंकर अकाल पड़ सकते हैं और लाखों प्राणी स्वाहा हो सकते हैं? यदि सरकार चाहे तो भारतवासियों को अकाल के विकराल चंगुल से बचा सकती है। परन्तु जब मुट्ठीभर चने देकर रत्न जड़ित आभूषण मिल सकते हैं तो किसी ऐसे प्रबल उपायों को सरकार क्यों काम में लाए; जिससे उसी को हानि नहीं है वरन उसके भाई बन्दों को भी सरासर हानि होने की सम्भावना है। यदि सरकार देशवासियों को अकाल से बचाने के लिए नाज का विलायत जाना बन्द कर दे तो क्या उसके भाई बन्द विलायत वासियों की भूख के कारण वही दशा न होगी जो आज कल भारतवासियों की है? क्या कोई बल रहते हुए भी अपने स्वजाति बान्धवों को क्षुधा से पीड़ित होने के कारण उनका भयंकर विकराल रूप देख सकता है? हां, केवल भारतवासी ही ऐसे हैं जो अपने भाइयों को मौत के मुख में देख कर अपना मुंह फेर लेते हैं और मन में प्रसन्न होते हैं कि अच्छा हुआ हमारा एक भाई नष्ट होगया! अब हम अकेले ही सारा सुख और आनन्द लूटेंगे। परन्तु अन्य देशवासी जिन में विवेक है वे इस बात को कभी सहन नहीं कर सकते। वे अपने भाई

को मौत के पंजे में फसते हुए देखकर इस कारण दुःखित होते हैं कि हमारा साथी जाता रहा। हमारे एक आदमी के नष्ट हो जाने से हमारी शक्ति कम होगई। अपनी प्रभुता बनाए रखने के लिए हमारा एक सहायक जाता रहा। इसी लिए वे अपने एक भाई को मरते देख दुःखित होते हैं और उसके बचाने का उपाय करते हैं, भारतवासी अपने भाई को मरते देखकर प्रसन्न होते हैं और उसे नीचे ढकेल कर मरने में सहायता पहुंचाते हैं। तात्पर्य यह कि रिलीफ़ का काम खोलने से सरकार का मतलब अपने साम्राज्य को भूंखे राक्षसों से रक्षा करना ही है किसी दया अथवा उपकार की दृष्टि से सरकार इन कामों को नहीं खोलती। यदि इन भूंखों को मुट्ठी भर अन्न देकर न मारा जाय तो वे राक्षस विकराल पेट की ज्वाला से पीड़ित होकर वृटिश साम्राज्य में भयंकर उपद्रव खड़े करदें जिसके कारण सरकार को बहुत ही हानि और कष्ट उठाना पड़े। अतएव साम्राज्य को बुभुक्षितों से बचाने के लिए ही सरकार ने रिलीफ़ का काम खोलने की अपूर्व युक्ति निकाली। भूंखे लोग देश में इधर उधर घूम कर कहीं उपद्रव न खड़ा करदें इसी लिए अकाल पीड़ित हज़ारों मनुष्यों को एक स्थान पर सरकारी अधिकारियों की निगरानी में रख कर अपने साम्राज्य को सुरक्षित रखना ही सरकार का मुख्य उद्देश्य है। पर काम करने वालों को सरकार एक अथवा डेढ़ आना रोज़ देती है जब अन्न रुपये का ६, ७ सेर बिकता है तब कोई मनुष्य एक आना अथवा डेढ़ आने में अपनी गुज़र किस प्रकार कर सकता है? तब कैसे कहा जाय कि सरकार भूंख से पीड़ित जान कर ही दया अथवा उपकार की दृष्टि से रिलीफ़ का काम खोलती है?

अकाल पीड़ित लोगों में अधिक लोग कौन हैं? हमारे विचार से तो इन लोगों में किसान और खेती का काम करने वाले ही अधिक हैं। पानी न बरसने से जब खेती का काम रुक जाता है तभी देश में भयंकर अकाल पड़ता है। यदि किसानों को माल-गुज़ारी और नाना प्रकार के करों से कस न दिया जाय, उनके

कठिन परिश्रम द्वारा उपार्जित उनके पसीने की गाढ़ी कमाई को चूस न लिया जाय तो एक साल क्या कई साल तक पानी न बरसे तो वे अन्न के बिना कभी मर नहीं सकते। परन्तु बन्दोबस्त के अस्थायी होने के कारण उनके कठिन परिश्रम का फल सरकार के घर चला जाता है जो कुछ बच रहता है वह सरकार के भाई बन्द अंगरेज़ व्यापारी अपने स्वदेश बन्धुओं का पेट भरने के लिए उसे विलायत ढो ले जाते हैं। ऐसी दशा में उनके प्राणों की रक्षा होना असम्भव है। यदि सरकार वास्तव में भारतवासियों को अकाल से बचाना चाहती है; यदि वास्तव में सरकार हमें सुख पहुंचाने की कामना रखती है, यदि सरकार की हम पर सच्ची दया है; यदि सरकार हमारे ऊपर शुद्ध अन्तःकरण से उपकार करना चाहती है; तो उसे चाहिए कि संकोच को परित्याग करके देश के एक ओर से दूसरे ओर तक स्थायी बन्दोबस्त बंगाल के समान कर दे। अनाज का विलायत जाना बन्द कर दिया जावे, स्वदेशी की उन्नति में तन, मन, धन, से सहायता पहुंचावे, जिससे देश की आर्थिक दशा सुधर सके। और भारतवासियों को अज्ञानान्धकार से निकालने के लिए स्वतंत्र रूप से शिक्षा का प्रबंध करे; फिर हम देखेंगे कि देश में अकाल किसप्रकार पड़ते हैं? यदि सरकार इस प्रकार हमारी सहायता करने के लिए तय्यार नहीं है तो हमें यह भी कहने में संकोच नहीं है कि रिलीफ़ वर्क्स खोलने की नीव दया और उपकार की दृष्टि से नहीं रक्खी गई है वरन रिलीफ़ वर्क्स खोलने की बुनियाद अपने साम्राज्य की रक्षा के लिए स्वार्थ पर रक्खी गई है। प्रेम दया और उपकार की ओर झुका के अपना स्वार्थ साधन करना सभ्य जगत के सामने और परम पिता परमेश्वर के सम्मुख कभी न्याय नहीं कहलाया जा सकता। क्या इस घृणित कार्य को विचारवान् पुरुष कपट के अतिरिक्त कोई दूसरा नाम इसका रख सकते हैं? अतएव हम सरकार से फिर एक बार यह जान कर भी कि हमारी विनय अथवा हमारे रोदन पर कुछ ध्यान नहीं दिया जायगा। कर्तव्य वश यही विनय करते हैं कि सदा एकसा समय किसी का नहीं रहता इस अवसर पर हमारे दुःखों को दूर करके हमें

सच्ची रिलीफ़ पहुंचाइए। इस बनावटी रिलीफ़ से हमारी तृप्ति न अब तक हुई है न होगी।

अकिल अजीरन रोग।

इस अकिल अजीरन रोग ने किसी को नहीं छोड़ा तमाम तिब्ब और वैद्यक छान डाला इसका इलाज कहीं न पाया। चाहे कोई कितना ही विशाल बुद्धि हो एक न एक अकिल अजीरन का पुछल्ला पीछे लगाही रहता है। सब के पहले हम अपने ही को जांचते हैं। मन में ते किये बैठे हैं कि हम अगाध बुद्धि के महा महासागर हैं, सच्चरित्र की ऐसी कसौटी तो कहीं ढूंढ़ने से भी मिलना कठिन है, इस लिये सर्वजन हितैषी होने की प्रगाढ़ इच्छा ने जो ज़ोर किया तो अकिल का अजीरन हो गया और यह बेहूदापन गांठ बांध लिया कि एडिटर बन पर उपदेश कुशल बनै। अपने हिन्दुस्तानी भाइयों का सब भद्दापन दूर कर इन्हें कुन्दन सा निखालिस और चमकीला कर दें" "प्रांशुलभ्ये फ़ले मोहा-दुद्बाहुरिव वामनः" चढ़ाव उतार के साथ ऊंचा नीचा समझाते उमर की उमर खेडाला पर कुछ असर न हुआ किसी एक बात में भी इन्हें सुधार करते न पाया। स्वराज की उत्कट वांछा अलबत्ता ज़ोर पकड़ती जाती है। कभी एक बार भी मन में नहीं धँसता कि हमारी इस सामाजिक गिरी दशा में स्वराज की बासना कितनी हास्यास्पद है। विद्या और बुद्धि वैभव में वाचस्पति के भी बाबा हमारे युवक जो निस्सन्देह देश की भावी भलाई के अंकुर हैं; जिनका नया जोश नई तालीम, नई रोशनी, नई उमंग सब मिल एक ऐसा नये तरह का अक़िल अजीरन उन्में पैदा कर दिया जिस्से पुराने ख़याल वालों की गन्ध भी उन्हें नहीं सोहाती। इन पुरानों को चाहता था कि दरीना बुज़ुर्ग और बहुदर्शी थे इन नयों की कदर करते सो उनके बजबजाते हुये सड़े दिमाग़ में जिसकी याद करते उकलाई आती है इन नयों की नई रोशनी धसती ही नहीं तब क्यों कर उनका अन्धकार दूर हो। जन्म जन्म का कोढ़ साफ़ होते २ होगा आज ही सब कैसे हट जाय। इन नये और पुरानों की अक़िल अजीरन ने हमारी हिन्दू समाज को डवां-

होल में छोड़ नौका समान मझधार में डुबोरही है। "हरहटों की लड़ाई में कपिला का विनाश"।

हमारी वर्तमान गवर्नमेंट अपने को इनसाफ़ पसन्द न्याय शील और उदार प्रसिद्ध किये हैं पर अक़िल अजीरन का पुछल्ला ऐसा उसके साथ लगा है कि जिससे उसके कर्मचारी गण यह कभी सोचते ही नहीं कि स्वजाति पक्षपात के मुकाबिले न्याय और उदारभाव उनके कामों से सिद्ध होता है? वरन सदा इसी कोशिश में लगे रहते हैं कि हिन्दुस्तानी उभड़ने न पावें। सरकार के राजकीय प्रबन्ध और मुल्की इन्तिज़ाम सब सराहने योग्य हैं। हर एक महकमें के अकिल का अजीरन जुटते २ पुलिस सिसटेम बन गया जिससे सरकार के न्याय में बट्टा लगने के अलावा अंगरेज़ी राज अत्याचार और बिद्दत करनें में नवाबी का भी कान काटे हुये है। वेदके समय के हमारे पुराने आर्यऋषि बड़े बुद्धिमान् तपस्वी पवित्र चरित्र और सकल विद्या पारंगत थे पर अकिल अजीरन ने उन्हें भी न छोड़ा। अपने सन्तान ब्राह्मणों को दक्षिणा लेने का पूर्ण अधिकार दे गये और लिख गये कि "अविद्यो वा सविद्यो वा ब्राह्मणो मामकी तनू" भगवान् कहते हैं "ब्राह्मण लिखा पढ़ा हो चाहे अपढ़ हो हमारी देह है" "अग्निमें होम करने से हम इतना सन्तुष्ट नहीं होते जैसा ब्राह्मणों के भोजन और उन्हें दक्षिणा देने से। यह न सोचा पीछे यह दक्षिणा उनके लिये ज़हर हो जायगी। दक्षिणा के सहारे ये पढ़ना लिखना सब छोड़ बैठेंगे और नितान्त बेकदर हो "पीर बबर्ची भिश्ती खर" बन बैठेंगे। दक्षिणा की आशा से सबों के सामने हाथ पसारना कैसा घिनौना काम है पर हमारे ब्राह्मण भाई इसे बड़ा प्रतिष्ठित समझ रहे हैं। अच्छा किसी ने कहा है :

"नित्यंप्रसारितकरः करोति सूर्योपिसन्तापम्"
"नित्यं प्रसारितकरो दक्षिणशाप्रसादकः"
न केवलमनेनैव दिवसोपि तनूकृतः।"

करके माने किरन और हाथ के भी हैं। सूर्य ऐसे तेजस्वी भी नित्य "कर" किरन दूसरे पक्ष में हाथ पसारे रहते हैं तो वह भी सन्ताप

देते हैं । हमने अनुभव पूर्वक इसे देख लिया है कि जबतक करके नीचे कर रखने की आदत ब्राह्मणों की दूर न होगी और सदा बेहने धुने का इन्हें मिलता जायगा तब तक ये कभी न चेतेंगे । जिस दिन निद्रा विसर्जन कर परशुराम के सामने ये चेत उठेंगे उसी दिन देश का दुख दरिद्र दूर हट स्वराज सहज में मिल जायगा । कोई अवतारिक पुरुष पैदा हो कि दक्षिणा मांगना इनका छुटा देतो बड़ा उपकार हो । कहां तक कहें इस अकिल अजीरन ने ईश्वर तक को नहीं छोड़ा । सृष्टि रचना करते समय उसकी कारीगरी में जो कुछ भद्दापन आता गया वह सब कूड़े के समान इकट्ठा होता गया और कूड़ों का ढेर का ढेर Embodied मुजस्सिम आकृतिमान् हो इल्लटरेट सेठ के आकार में परिणत हो गया। दूसरे यह कि अकिल का अजीरिन नहीं तो इसे कौन शऊरदारी कहैगा कि उड़ैसा में तो इतना पानी बरसै कि देश का देश बह जाय देश के और हिस्सों में कहीं कसम खाने को भी श्रावण के उपरान्त बूंद धरती पर न आवे । सबेरे ही से बारहो सूर्य इकट्ठे हो जो आंख फाड़ एक टक चितौने लगे तो दो महीने तक पलक न भांजा खेती सब एक दम ठांव ही पटपटाय रह गई । पशु सब तृण के अभाव से संयमिनी पुरी के पाहुने होने लगे । गल्ले के रोज़गारियों की बन पड़ी रेलोंआदर्स के ढो लेजाने से जो बच गया उसे मोतियों के भाव बेचते हुए रुपये से अपना घर भर लिया । मारे खुशी के पेट उनका नगाड़ा सा फूल उठा । "क्वचित् दोषो गुणायते" दैव का यह अकिल अजीरन उनके लिए पारस हो गया "किसी को बैगन बावले किसी को बैगन पथ्य ।,, वाली कहावत ठीक उतरी । अन्त को यही कहने का मन होता है कि सब रोगों में अकिल अजीरन लाइलाज मर्ज़ है और कोई नहीं बचा जो ईश्वर की विचित्र रचना में इस बीमारी में मुवतिला न हो ।

स्वराज्य क्या है ।

गुलामी से छुटकारा पाय स्वच्छन्द हो जाना ही स्वराज है । स्वराज्य हमारे लिए कोई नई बात नहीं है भारत में सदा से स्वराज्य रहा है । जिस तरह हमारा सनातन धर्म सदा से चला आ

रहा है और चला जायगा। यह स्वराज वेदान्तियों की मुक्ति के समान है मुक्ति पाने के साधन में विघ्न जैसा अविद्या या माया है वैसाही स्वराज्य में भी अनेक विघ्न हैं और होते रहैं गे। यह कोई ऐसी वस्तु नहीं है जो मांगने से मिल जाय जिसका इसपर पूर्ण अधिकार या पूरा कब्ज़ा है वह क्यों देने लगा। संसार का क्रम है जिसने एक वस्तु पर अपना दखल जमा लिया और वह वस्तु सर्वथा प्राप्त हो गई तो कल आप दूसरी वस्तु के लिये हांथ पसारेंगे। और उसको भी गटक कर तीसरी पर दांत लगावेंगे तब वह बेचारा जो सर्वस्व का मालिक बना बैठा था थोड़े दिनों में निकाल बाहर कर दिया जायगा। अच्छा तब बिना मांगे मिलने का उपाय क्या है। उपाय यही है कि उन अनेक विघ्नों का कुछ ख्याल नकर जो विपत्ति आवे उसे झेलता जाय; सब तरह का कष्ट सहता रहे; और अपने लक्ष्य की ओर ध्यान जमाये काम करता जाय। अपने में शक्ति पैदा करना, एक दिल होना, अपने सहारे चलना, इत्यादि इसके प्राप्त करने के उपाय हैं। तैरने वाला जैसा एक दम पानी पर अपने को छोड़ देता है तब तैरता है वैसा ही हम लोग भी अपने बाहुबल का सहारा ले ईश्वर पर दृढ़ विश्वास रख जब कोई काम करेंगे वो निश्चय कृतकार्य होंगे। परमात्मा की कुछ ऐसी ही प्रेरणा भी मालूम होती है नहीं तो डेढ़ साल के बीच एकाएक लोगों में जागृति पैदा हो जाना और लोगों के कान खड़े हो जाना मानुषी कृत्य नहीं है। सत्य की सदा विजय होती है जहां सत्य है वहां ईश्वर है। यदि अपने लक्ष्य के प्राप्त होने में विलम्ब हो तो वह हमारा दोष है ईश्वर का नहीं।

जातीय शिक्षा का प्रचार अपने निजका काम है। गवर्नमेंट इस विषय में और कुछ सहायता नहीं दे सकती जो शिक्षा हमें सर्कार की ओर से मिली है बहुत है। इतनी ही तालीम हम लोगों की गवर्मेंट को अखर रही है और खटक पैदा हो गई धीरे २ तालीम कम करने की फिकिर हो रही है। तब जातीयशिक्षा में सर्कार से सहायता पाने की

कौन आशा की जा सक्ती है। दूसरा काम अपनेयहां की कारीगरी का बढ़ाना और तन मन, धन से उस के लिये यत्न करना है। कोई कौम सदा गुलामी में नहीं रही इतिहास हमे यही सिखाता है। अपनी भीतर की ज्योति को बाहरी ज्योति से मिलाने का यत्न और धीरज धरे आगे कदम बढ़ाते जाना ही हमारा कर्तव्य कर्म है। इस तरह पर चले जाने से एक शताब्दी नहीं ५० वर्ष भी नहीं वरन २० वर्ष की अवधि बहुतही ज़रूरी मालूम होता है। स्वराज के लिये जातीय शिक्षा स्वदेशी और बायकाट दोनों की ज़रूरत है। कुछ लोगों की राय है जहां तक हो सके बायकाट अपने चित्त में रक्खें जिन से हम सब भांति दबे हैं उनको चिढ़ाने से सिवाय हानि के लाभ कोई नहीं है। हमारे नौ जवानों में उन्नति के सब अंकुर पाये जाते हैं एक Rashness अविचार कारिता कृत कार्य होने के लिये बहुत हानिकारक है तब हम उसे क्यों न छोड़दें।

सहसा विदधीत न क्रिया मविवेकः परमापदांपदम्
वृणुतेहि विमृष्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेवसंपदः॥

जल्दी में आय बिना सोचे विचारे कोई काम न कर डाले अविवेक परम विपत्ति का कारण है गुण की लोभी संपति आपसे आप आकर उसे बर लेती है जो विचार पूर्वक काम करने वाला है—२० वर्ष में येही नवयुवक परिपक्व बुद्धि वाले हो देशोद्धार के द्वार होंगे—एक Generation नसल को सब तरह का खतरा उठाना पड़ेगा उसके उपरान्त जो नसल होगी वह स्वराज का सुख भोगेगी। धनवान् सेठ सहूकारों में देखा जाता है कि उनके वंश का एक कोई प्रधान पुरुष या मूरिस आला लाखों रुपया कमाय छोड़ जाता है लड़के और पोते उस धन का सुख भोगते हैं। यही बात हर एक कौम तरक्की के साथ भी लगी है हमारे साम्प्रयिक शासनकर्ता के पूर्व पुरुष एक बार अपना जीवन खतरे में छोड़ विजयी हो अब अपने वंशधरों को सर्वस्व सुख के भोक्ता कर गये। अच्छा कहा है। "न साहस मनारूह्य नरो भद्राणि पश्यति साहसं पुनरोरूह्य यदि जीवति पश्यति" अपने को खतरे

में बिना डाले मनुष्य कल्याण की बात नहीं अनुभव करता। खतरे में डाल जीता बचै तो सकल सुख का अधिकारी अपने को पावेगा। हम अपने किसी दूसरे भाई के मुक़ाबिले ज़रा भी अपनी हानि नहीं सहा चाहते तब जान को खतरे में डालना तो सपने के ख्याल हैं। इसी तरह की जागृति क़ायम रही और लंगड़े लूले न कर दिये गये तो कुछ दिन में स्वराज के क़ायम होने का प्रागरूप क़ौमियत आ जाना संभव है। कौमीयत का आना स्वराज की पहली सीढ़ी है। इस सीढ़ी पर धीरे २ चढ़ने का समय अब आ रहा है अब जो कुछ करना हो जल्द करैं।

प्यासा पथिक।

एक प्रबन्ध कल्पना।

हे जगदाधार सब ओर से निराधार इस प्यासे पथिक की प्यास अब केवल तू ही बुझावे तो बुझावे। बड़े २ जलाधार सरित समुद्र से भी जो न हो सका वह अल्पतोय तुच्छ कासार से कब संभव है! जिसके कर्दममय पंकिल पानी में अगाध जल संचारी रोहू फर फराती हुई क्षुद्र सफ़रीसी बार २ करवटें लेती हुई चाण्डाल निर्दयी ग्रीष्म के दिन गिन रही है और सकल भुवन को जीवन दान देने में दक्ष नीरद की बाट जोह रही है। तपन की खरतर किरणों से सन्तापित भूमण्डल को तप्त लोह पिण्ड के आकार का कर देने वाले जेठ मास के नाम का सियापा मानों उसके जीते ही गा रही है। हा धिक् मैं अपनी जघन्यता को कहां तक पछताऊं दीन दुखिया प्यासे बटोही दूर देश से आये और निराश लौट गये। "धिग् जन्म अर्थि विमुखस्य" कहता हुआ यह कासार मानों आंसू बहा रहा है वही आंसू इस सूखे ताल में कांदों बन गया। नये जलद के जल में लौ लगाये मेढक कासार के उसी कांदो के नीचे पैठता जा रहा है। उजड़े घरकी संपत्ति समान शतपत्र कमल अपने सैकड़ों पत्तों से ताल को सब ओर से ढांपे हुये मानों इस चेष्टा में लगा हुआ है कि यद्यपि यह ताल अपना भरम गवांय बैठा है फिर भी इसकी पोल क्यों खुलने पावे। मानों इस बात को प्रगट कर रहा है कि भले लोग अपनी भलाई से कभी नहीं चूकते। अथवा सुगन्धि

सौन्दर्य कोमलता आदि गुण अपने में देख कमल पंकज कहा जाता है इस अपनी नीची पैदाइश के छिपाने को शत पत्र हो गया है। जिसमें सैकड़ों पत्तों से वह अपनी नीची पैदाइश के कलंक छिपाने में भरपूर कृतकार्य हो सके। अस्तु बटोही पानी के लिए लौ लगाये यहां से निराश हो आगे बढ़ा। हमारे पढ़ने वाले इस कासार को स्मरण रक्खें वह आगे चल पथिक के बड़े काम का होगा।

यह प्यासा पथिक पानी की खोज में वहां से आगे बढ़ा तो दूर से एक पर्वत स्थली देख पड़ी पहाड़ों को तरहटी में कोसों तक ऐसी धरती इसे मिली जो सब ओर हरियाली से ढपी हुई थी। हरी २ घास सूर्य की किरणों में ऐसा चमक रही थी मानो हरे मखमल का बिछौना बिछा हो या कोसों तक धरती में पन्ना जड़ दिया गया हो। इस पर्वत की उपत्यका या प्रान्त भूमि की मन भावनी शोभा ने देख मेरी प्यास न जानिये कहां बिलाय गई। इसकी प्राकृतिक शोभा मेरे मन को ऐसा आकर्षित कर लिया कि मुझे कुछ खयाल न रहा कि मैं कौन हूं कहां जा रहा हूं और क्या मेरा उद्देश्य है। कुछ दूर आगे बढ़ा तो एक दूसरा चित्र सामने आया। छोटे बड़े वृक्ष पर्वत की प्रान्त भूमि को ऐसा आच्छादित किये थे कि मानों उस पहाड़ पर चढ़ने और उतरने के लिये सीढ़ियां बन रहे हों जिन पर भांत २ के पक्षी अपने मधुर कलरव से कान को सुख दे रहे थे। पेड़ों की डालियों पर ठौर २ मयूर नाचते हुये केका बाणी से अपनी प्रणयिनी प्रिया मयूरी को प्रसन्न कर रहे थे। पेड़ों की हरियाली से मुझे विश्वास था कि वहां अवश्य कोई जलाशय है वहां पहुंचते ही मेरी सब प्यास बुझ जायगी अमृत समान जल पान कर अघाय उठूंगा सदा के लिये आसूदगी मिलैगी। तृष्णा के मारे अब मुझे दर दर न घुमाना पड़ैगा। इसी खयाल से सर्वथा असमर्थ भी गिरता पड़ता लड़खड़ाता वहां पहुंचा। किन्तु वहां पहुंच इसे मालूम हुआ कि ये वृक्ष और यहां की पर्वत स्थली दूरकी ढोल की भांत सोहावनी थीं। नाम को भी कहीं जल का एक बिन्दु नहीं है। यहां की लहलहाती हरियाली देखने ही मात्र के लिये है वास्तविक गुण का वहां अभाव है। इस प्यासे पथिक को अभी चिरकाल तक प्यास का दुःख सहना बदा है। शेष-

चला जाय चरखा।

चला जाय चरखा पिन्न पिन्न—स्वदेशी स्वराज्य बायकाट जातीय शिक्षा पिन्न पिन्न। अब तो इस क्षुद्र चरखे का क्या ज़िकिर भांत२ के बड़े २ लूम बुनने और कातने की अनेकें कल चल पड़ी हैं पर हमारा यह क्षुद्र चरखा न बन्द हुआ चलता ही रहा। चला जाय चरखा पिन्न २। यह चरखा कुछ आज का चला हो सो नहीं महा भाष्यकार पतंजलि और महर्षि पाणिनि तक को इसकी ख़बर थी गोत्रस्खलन की भांत लिख गये। "छिन्न पिन्न पिन्न छिन्न" पिन्न २ चला जाय चरखा पिन्न २।

जिसके मन में जो बात बसी रहती है दिन रात जिस पर ख्याल जमा रहता है साधारण बात चीत में वह बात अचानक उसके मुंह से निकल जाती है वही गोत्रस्खलन कहा जाता है। महाभाष्य के लेख से प्रगट होता है कि महर्षि पतंजलि को यह पिन्न २ गोत्रस्खलन हो गया। चलाजाय चरखा पिन्न २।

अस्तु बहुत दिनों से इसका चलना ढीला पड़ गया था यद्यपि क्लब कमेटी डिबेट वग़ैरह मुबाहिसों में चरखे की क़दर समझने वालों ने इस की चरचा नहीं छोड़ा सन्निपात ज्वर की तेज़ी की तरह अल्प काल के लिये चरखा चलाने का जोश चढ़ खुद बखुद उतर जाता था। किन्तु ईश्वरीय प्रेरणा ने कुछ ऐसा रंग जमाया कि लार्ड कर्ज़न महोदय को बंगाल के दो टुकड़ा करना सूझा—बंगाल के दो टुकड़े होते ही इस चरखे की Selid foundation स्थिर बुनियाद पड़ी। चला जाय चरखा पिन्न २ — लाजपतराय और अजीत सिंह इसी मतलब से मंडाले पकड़ कर भेज दिये गये जिसमें यह चरखा बन्द हो। पर यह काहे को कभी बन्द होने वाला था चला सो चला। चला जाय चरखा पिन्न २। रेज़ली सरकुलर निकला २० आदमियों की कमेटी का क़ानून पास किया गया पर चरखे में कोई असर न पहुंचा। चला जाय चरखा पिन्न २।

पाल महाशय ६ मास के लिये जेल भेज दिये गये सन्ध्या और युगान्तर के सम्पादकों की दुर्गति की गई। तूतीकोरन में बलवा किया

गया म्यूनिटिक पुलिस वहां कायम हुई। एक २ अंगुल ज़मीन पर मुख़बिर मौजूद हैं यहां कोई वाकया होते देर न हुई कि वहां चाण्डाल डिटेकटिबों ने कर्मचारियों के कान भरे। यह सब इसी ख्याल से हुआ कि अब भी चरखा रुक जाय किन्तु सब व्यर्थ गया चरखा बराबर चलाही किया। चला जाय चरखा पिन्न २। स्वदेशी स्वराज्य वायकाट और जातीय शिक्षा। पिन्न २। बाम्बश्यल दागने वालों की जमात में शरीक होने के अपराध में अरबिन्दो बाबू गिरफ़तार हुये हैं किन्तु एक क्यां सौ अरबिन्द पकड़े जांय और जेल में भेजे जांय यह चरखा कभी बन्द होने वाला नहीं मालूम होता चला सो चला। आरंभ में बंगाली बाबुओं ही ने सर्कार के कदम यहां जमाये वेही अब उखाड़ने में लगे हैं—चला जाय चरखा पिन्न २।

हिन्दुस्तान को फाइदा पहुंचाने का उपाय।

झूठी राजभक्ति प्रगट करने वाले देश के शत्रु महा मण्डल के कई एक नेता कलकत्ते की काल कोठरी में क़ैद कर दिये जांय। एँगलों इण्डियन पत्र, पायोनियर, इंगलिशमैन, टाइम्स इत्यादि के सम्पादक तथा सहायकों की जीभ सी दी जाय जिसमें हम हिन्दुस्तानियों के निस्बत जो बहुधा बदख़ाही का कलमा उनकी ज़बान से निकलता है सो न निकला करे। हिन्दू धर्म के नेता और राह दिखलाने वाले पाधा पुरोहित पण्डे पुजारी तथा गुरू पकड़ २ अंगरेज़ी पढ़ा दिये जांय जिस में उनके नेत्र खुलें और प्रजा को जो गुमराही में झोके देते हैं सुशिक्षित हो इस जघन्य कर्म से बचें। पढ़ लिख वे ही शिष्य अथवा यजमानों में जागृति पैदा करने वाले हों। बाल्य विवाह के उत्साही पुराने लोगों की आंख फोड़ दी जाय जिस में दूध मुहों के गले में चक्की बांध जो उनका जन्म नष्ट कर देने को आंख का सुख जानते हैं उस सुख से वे सदा के लिये वंचित रहैं न रहैगा बांस न बजैगी बासुरी।

मुहाविरे।

पहिले अंकों में हम मुहाविरों का संग्रह कर चुके हैं आज उसी में कुछ और जोड़ उन्हें पुनः उद्धृत करते हैं।

नाम—रामनाम—नेक नाम—बदनाम—नामवर।

धाम—परंधाम—बैकुण्ठ धाम।

काम—अपना काम—बे काम का काम—देश की भलाई का काम बुरा काम ईश्वर न करे कोई इस बला में मुब्तिला हो दीन और दुनियां दोनों से दूर गुज़र होगा।

दाम गांठ का दाम—दाम करे सब काम।

बल बाहुबल—बुद्धिबल—यावद्बुद्धिबलोदय—बलाबल।

जल—वर्षा का जल—गंगाजल—अमृतजल—मल—खटमल—मोटेमल।

फल—उद्योग फल—कर्म फल।

कौड़ी—गाढ़े पसीने की—मशक्कत की—कौड़ी के तीन तीन।

घोड़ी—हिमायतकी—पगड़ी—फज़ीलत की। रोटी—दांत काटी।

बेटी—ब्याही बरी—जिसकी बेटी उसकी रोटी।

नक़ल—परवाने की—चाल ढाल ससधज की।

साथ—चोली दामन का—खाने पान का—मौत ज़िन्दगी का।

सौदा—पट जाने का। मेल—मिलने का।

शरीक—धुयें का—परोस दर्द शरीकीका।

दोस्ती रिफाकत की—महाजनी—शाख की।

छिनना नीयत का—काटना—काल का।

ओटना—चर्खेका—लोटना—पांव तले का।

तवंगरी—जी की—बुजुरगी—अक़िल की।

चलना—नामका—पेटका—मुहका—हाथका चालका—रोजगारका।

चलन—हुंडीकी—पैसेकी—बाज़ारकी।

चाल—चिउंटीकी—जनमासे की—हंस की—मस्तगयन्द की।

लगना—लगन का—आंख का—मन का।

जमना—तबियत का। मोड़ना—मुह का।

चढ़ना–निगाह पर का। मारना–भांजी का–हाथ का।

आब–मोती की। खाना–गम का। लुटना–हाथ का–साथ का।

लेना–नाम भगवान का–देना–उधार का–टूटना–रिश्ते का। दृग उरझत टूटत कुटुम्ब जुरत चतुरसों प्रीति–पड़त गांठ दुरजन हिये दई नई यह रीति।

स्याही–दिल की–कालिमा कलंक की–अपयश की।

पलटना–किस्मत का–फूटना–भाग का–पीटना–ताशी का सिर का–छाती का।

फिरना–कालचक्र का–दिन का–किरंना–दांत का।

वृत्ति–आकाशी–अजगरी–सिलोंछ–का पोती।

है हत लाल कपोतव्रत कठिन नेह की चाल–मुख सो आह न भाखिहौं निज सुख करी हलाल।

चरखा–रांडो का–हाकिमी गरम की–बनियई–नरम की–आढ़त धरम की–खेती करम की–रोशनी–नई तालीम की–टिर्रे बंगालों की। फूट हिन्दुवों की–प्रताप–अङ्गरेज़ों का–धूम स्वराज की–दल–नरम और गरमों का।

जानना वही–जिसके जानने से ईश्वर जाना जाय–जोश वही जो मुल्की हो–जाना वही कि फिर न आना हो–दान वही जो साथ सन्मान के हो–प्रीति वही जो साथ प्रतीत के हो–नीति वही जिसमे अनीत की गन्ध भी न हो–जीत वही जिस से मन जीता जाय।

संपादकीय टिप्पणी

बम् का गोलादागने के उपद्रव से निश्चय हो गया कि हिन्दुस्तान में अनारकिस्ट अराजकता फैलाने वाले पैदा होगये और उनका समूह प्रति दिन बढ़ता हुआ मालूम होता है। पायोनियर से यह भी विदित होता है कि यह गरोह १० वर्ष से कायम है। हमें ऐसे गरोह के कायम होने का रंज है। भारत सदा से राजभक्त रहा यह केवल पश्चिमी शिक्षा का फल है। अब विचार यह किया जाता है कि यहां यह राज-विद्रोही दल

क्यों कायम हुआ विशेष कर ऐसे देश मे जहां के लोग बड़े राज भक्त, धार्मिकऔरभीरुऔर शांत प्रकृति के होते आये हैं। निश्चय यह इसी का परिणाम है कि जिन के हाथ में शासन की बागडोर है उन का अन्याय इतना असह है कि लोग अपनी जान पर खेल ऐसे काम पर उद्यत हो गये। हमारे गोरे अधिकारी अब भी चेतते और कड़ाई से मुह मोड़ते तो अच्छा था। पर वे ऐसा न करेंगे और प्रजा मे ऐसे २ उपद्रवियों का दल बढ़ना अच्छा नहीं। जब लोग अपनी जान पर खेलने को मुस्तैद हैं तो कौन उम्मेद की जाय कि इस तरह के उपद्रव अब न होंगे। ऐंग्लो-इण्डियन पत्रों की बन पड़ी वे इस विद्रोह की अग्नि में पानी छोड़ने के बदले सर्कारी कर्मचारियों को और भी भड़कावेंगे। यह तो ते है कि ऐंग्लो इण्डियन पत्र देश के बड़े Curse बद दुआ हैं और इन की करतूत से राजा प्रजा दोनों मे अनबन बढ़ता ही जायगा।

इलाहाबाद के कनवेनूशन से कानग्रेस के लिये क्या उपकार हुआ इसका विचार किया जाता है तो यही मन में आता है कि इससे कानग्रेस में कुछ न कुछ कमज़ोरी ज़रूर आई। इसका मुख्य उद्देश्य तिलक महोदय को अलग करने का था इसी से बांबे वालों ने इसपर विशेष ज़ोर दिया। दूसरी बात "रौडीइज़िम्" का रोकना था सो भी बिना तिलक को मनाये उसका रुकना असंभव था इस लिये कि तिलक और रौडीज़ का सम्बन्ध धूम और अग्नि कासा है "यत्र २ धूमस्तत्राग्निः" कांग्रेस में रौडीज़ कुछ न कुछ उपद्रव करते ही जांयगे और हुल्लड से कानग्रेस को सुख से न करने देंगे चाहो नरम लोग कितना ही हुल्लड़के बरका बने का यत्न करें-

इलाहाबाद की सेवक समिति बड़ा काम कर रही है। मूठी २ जो अन्न घर २ मांग ये लोग इकट्ठा कर रहे हैं उस्से २२० अकाल पीड़ित आदमियों को गत मास मे मदत पहुंची। यह मदत उन्हें दी गई जिन्हें सर्कार से सहायता न मिली थी। यहां एक मकान में आग लग गई थी स्वयं सेवक वहां पहुंच झट पट बुझाय चंपत हुये। अपने भाइयों पर

सहानुभूति का आदर्श ये स्वयं सेवक हैं—ये देश के भावी कल्याण सूचक हैं इन के प्रत्येक काम में इन्हें ईश्वर कृतकार्य्य करता रहे—

मिस्टर आर सी दत्त और मि॰ गोखले के विलायत जाने के समय बम्बई में एक डिनर दिया गया। उसमें दत्त ने मारली साहब के रिफ़ार्म के बारे में बहुत आशा जनक बातें कहीं उन्होंने यह भी कहा कि लिबरल दल पर हमें बहुत भरोसा है और हिंदुस्तानी मात्र को होना चाहिए। यह वही दत्त हैं जो गवर्मेंट की आयव्यय सम्बन्धी पालिसी में पहले बहुत कुछ दोष निकाल चुके हैं और लखनऊ की कांग्रेस में प्रेसीडेंट भी हो चुके हैं। डिसेन्ट्रेलाइज़ेशन कमिशन में एक ओहदा पा जाने से जाल में फँस गये। इसमें मि॰ दत्त का कुसूर नहीं है कुसूर उस पद का है जो इन्हें हाल में मिला है। बल्कि मि॰ गोखले ने ऐसा नहीं किया उन्होंने ऐसी झूंठी आशा नहीं दिखाई बल्कि अपनी प्रार्थनाओं को पूरा न होने का दोष अपने देशवासियों के ऊपर थोपा। उन्होंने कहा कि यह हमी लोगों की बेसबरी का फल है कि मारली साहब से जितनी आशा की जाती थी उतना नहीं किया। हम गोखले महाशय से पूछते हैं यह आन्दोलन तो तीन वर्ष का है गवर्मेंट ने हमारी किन २ प्रार्थनाओं को पूरा किया है। जब हमारी प्रार्थना नहीं सुनी जाती तो बार २ गिड़ गिड़ाने से क्या लाभ। जो प्रयत्न इस गिड़-गिड़ाने में किया जाता है वही प्रयत्न अपने भाइयों को सुझाने में जो बिल्कुल अंधेरे में पड़े हैं लगाया जाय तो कितना उपकार हो। मांगना बुरा नहीं है यदि हमारे मांगने का कुछ फल देख पड़े। इस समय तो प्रजा काल में भूखों मर रही है और रोटी मांग रही है। जहां जाओ वहां क्या शहर में क्या दिहात में सब जगह रोटी २ की चिल्लाहट मच रही है। क्या मारली साहब के रिफ़ार्म इस मांग को पूरा कर देंगे। यह भूख तभी बन्द होगी जब देश की पैदावार देश ही में रह जायगी और देश का धन देशवासियों ही के भलाई में लगाया जायगा। सो इन कमीशनों और डेप्युटेशनों से कभी नहीं होना है।

———

पुस्तक प्राप्ति।

ग्रीस की स्वाधीनता।

ठाकुर सूर्य्यकुमार वर्मा रचित हिन्दुस्तान और यूनान (ग्रीस) दोनों बड़े पुराने देश हैं। दोनों प्राचीन समय से विद्या की सिद्ध पीठ बड़े २ दार्शनिक और फिलासफरों की जन्म भूमि हैं। यह सभी जानते हैं कि सुकरात, अरस्तू, अफलातू आदि सब यूनानी थे वैसाही जैसा गौतम तथा कपिल कणाद आदि दार्शनिक सब यहां जन्मे हैं। दिग्विजयी सिकन्दर भी यहीं हुआ है। जैसा संस्कृत परिस्कृत है वैसाही वहां की पुरानी भाषा ग्रीक भी सब भांत मंजी हुई है। जैसा बाल्मीकि ने रामायण रचा है वैसा ही होमर ने इलियड नाम की पुस्तक वहां रचा है कथा दोनोंकी एक सी है और बहुत कुछ मिल जाती है। जैसा भारत में अयोध्या, हस्तिनापुर, पाटलि-पुत्र, द्वारिका, मथुरा, कन्नौज आदि प्राचीन नगर थे वैसा ही ग्रीस में स्पारटा एथेन्स करिन्थ और थीन्स प्रसिद्ध नगर थे। सारांश यह कि हिन्दुस्तान और यूनान सभ्यता की चरम सीमा तक पहुंचे हुये देश थे। इन्हीं सब बातों को पुस्तक रचयिता ने बड़ी उक्ति युक्ति के साथ दोनों देशों को मिलाया है। किन्तु दैव के कोप से जैसा हिन्दुस्तान गिर गया और सैकड़ों वर्ष से स्वाधीनता का सुख खोये बैठा है वैसेही ग्रीस भी चिरकाल तक पराधीन हो अनेक दुःख झेलता रहा। बहुत दिनों तक रोमवाले इसे सताते रहे फिर अत्याचारी टरकी के मुसल्मानों से पीड़ित हो अनेक दुःख सहा किया। १८१५ ईस्वी में ग्रीस स्वतन्त्रस्वाधीन देशों की गणना में आगया है पर भारत की आरत दशा वैसी की वैसी ही बनी है। कलकत्ता के भारत मित्र प्रेस में यह मुद्रित की गई और उपहार में बांटी गई है। ऐसे २ बीस ग्रीस भारत में समाय सकते हैं तब स्वाधीनता में भारत कैसे ग्रीस के समान हो सकता है। यह पुस्तक मराठी भाषा का अनुवाद है। पढ़ने में बड़ी मनोरंजक है।

बाल भागवत

दूसरा भाग

इस पुस्तक को इण्डियन प्रेस प्रयाग ने छाप कर प्रकाशित किया है। पुस्तक के ऊपर लेखक का नाम नहीं दिया है इसलिए नहीं कहा जा सकता कि यह पुस्तक किस की लिखी हुई है पुस्तक पढ़ने से ज्ञात होता है किसी आर्य समाजी की लिखी है। उपसंहार में लिखा है कि 'देश में जब जब पापी बढ़े, तभी तब ईश्वरीय अंश से कोई न कोई महात्मा पैदा होता रहा है। जिन अवतारों को हम साक्षात् ईश्वर मानते हैं उनको ईश्वरीय अंश कहना, मानो उनके ईश्वरत्व को कम करना है। कई स्थानों पर भगवान् कृष्णचन्द्र आनन्द कन्द के चरित्र को भ्रम-वश लेखक ने आर्यसमाजी ढंग में बदल दिया है। लेखक महाशय यदि आर्य समाजी हैं तो उनको अपना नाम प्रकाशित करने में क्यों भय लगता है। क्या धन के लोभ में पड़कर अपने विचारों को भी उन्होंने बदल डाला? यदि यह पुस्तक किसी हिन्दू धर्मावलम्बी की होती तो अवश्य हिन्दू बालकों को और भी अधिक उपयोगी होती। अथवा महाभारत के अनुसार कृष्ण चरित्र लिखा जाता और उसमें कृष्ण महाराज की वीरता, धीरता, साहस, रण कुशलता और राजनीतिज्ञता दिखलाई जाती तो अवश्य कृष्ण का चरित बालकों के लिए अनुकरणीय हो सकता था। जिस उद्देश्य से 'बाल सखा पुस्तक माला' आरम्भ में निकाली गई थी वह उद्देश्य ऐसी पुस्तकों के प्रकाशित होने से पूरा होता दिखाई नहीं पड़ता। यदि इस पुस्तक माला में सामयिक ज्ञानोपार्जन के योग्य उत्तम उत्तम पुस्तकें प्रकाशित हों तो अवश्य बालकों को लाभ पहुंच सकता है। हमारे विचार में आज कल नवीन विचारों और पाश्चात्य विज्ञान का ज्ञान बालकों को सरल भाषा में करा देने से बहुत लाभ होगा और इसी प्रकार की पुस्तकें प्रकाशित करने से इस पुस्तक माला की उपयोगिता सिद्ध हो सकती है। पुस्तक इंडियन प्रेस में बहुत ही सुन्दर छपी है। दाम॥) मिलने का पता—इंडियन प्रेस, प्रयाग।

-:॥ श्री ॥:-

हिन्दी प्रदीप

जिल्द ३० | अप्रैल सन् १९०८ | संख्या ४

भगवत् शङ्कराचार्य ।*

जिन २ महा पुरूषों ने व्यासदेव के वेदान्त सूत्रों पर भाष्य किया है वे आचार्य कहलाये उन्में श्रीशंकराचार्य जी सब में मुख्य हैं और इनका शारीरक भाष्य सर्व सम्मत समझा जाता है अतएव अद्वैतमत के मुख्य प्रवर्तक यही महानुभाव हुये। वैदिक धर्म को छिन्न भिन्न करते जिस समय मायावादी बौद्ध जैन चार्वाक तथा लोकायत हिन्दुस्तान में एक छोर से दूसरे तक फैल गये थे। बड़े२ राजा महाराजा शूरसामन्त सब बौद्ध यां जैन हो गये थे सिवाय बौद्धधर्म और जैनधर्म के कापालिक क्षपणाक वामाचार चक्राङ्कित शैव शाक्त आदि भिन्न २ मत के अनेक पाखण्ड मत फैले हुए थे। ऐसे समय दक्षिण के केरलदेश में जो अब मालावार कहलाता है पूर्णानदी के तट पर कालटि नाम का एकग्राम जो मुख्य कर ब्राह्मणों ही की बस्ती थी उस में विद्याधिराज के पुत्र शिवगुरू नाम के एक वेदवेदाङ्ग पारङ्गत अग्निहोत्री ब्राह्मण हुये उन्हीं की पाणिगृहीती

* यह लेख पढ़ने वालों को इतना रुचा कि एक कापी न बच रही और इसकी मांग आती है इससे पुनः उद्धृत करना पड़ा।

साध्वी भार्या में शंकराचार्य का जन्म हुआ। शिवपुराण के अनुसार यह साक्षात् सदाशिव के अवतार माने जाते हैं पद्मपाद हस्तामलक तोटक सहुंक आनन्दगिरि ये ५ शंकर के प्रधान पट्ट शिष्य भी जिनके द्वारा अद्वैतवाद समस्त हिन्दुस्तान में फैल गया इसी समय भिन्न २ देशों में उत्पन्न हुये। इसी समय साक्षात् बृहस्पति के अवतार मीमांसकों के कुलगुरु मण्डन मिश्र दक्षिण की माहिष्मती नगरी में जन्में। मण्डन मिश्र की धर्मपत्नी न केवल नामही में बरन गुण में भी सरस्वती के समान सोण नद के तट पर रहने वाले विष्णु मित्र ब्राह्मण के घर में आ प्रगटी। शंकर दो वर्ष के थे तभी देवनागरी वर्णमाला का बोलना और लिखना दोनों अच्छी तरह सीख गए इनकी प्रतिभा कुछ ऐसी अद्भुत थी कि इसी उमर से काव्य, पुराण, इतिहास आदि की जो बातें इन से कहीं जाती या कहीं से ऐसी बातों को सुनते थे उसे तत्काल अपनी धारणाशक्ति के अन्तर्गत कर लेते थे। तीन वर्ष के थे तभी इनके पिता सुरधाम सिधार गये इन की विधवा माता ने पंचम वर्ष में इन का यज्ञोपवीत संस्कार शास्त्र विधान पूर्वक कराया। तैत्तिरीय संहिता की अध्याय की अध्याय वेद इनको पाठशाला में सुनते २ यज्ञोपवीत होने के पहिले ही कण्ठाग्र हो गये थे। यज्ञोपवीत संस्कार एक उपलक्षणमात्र था सप्तम वर्ष समाप्त होते २ निखिल वेद और वेदाङ्ग इन्हें सब आप से आप उपस्थित हो गया। सातवर्ष की उमर में समस्त विद्या में पारंगत हो गुरुकुल का वास समाप्त कर यह महायशस्वी माता की सेवा टहलमें तत्पर हुये। नित्य वेद पाठ किया करते थे अग्नि और सूर्य की विधिवत् उपासना से घर में रहते हुए भी अखण्ड ब्रह्मचर्य में कहीं से चूक न होने पाई। इस तेजस्वी बालक को बड़े २ बूढ़े लोग भी आकर प्रणाम करते थे और इसे देख अपना आसन छोड़ देते थे अपने पुत्र के ये सब अलौकिक गुण देख मा इनकी हर्ष निर्भर हो फूली नहीं समाती थी। एक दिन शंकर को साथ ले उनकी माता समुद्रगामिनी नदी में स्नान करने को गई थीं रास्ते में ग्रीष्म के सूर्य की तीखी किरणों से व्याकुल हो बेहोश गिर पड़ीं शंकर इसे व्याकुल देख समुद्रगा-नदी की काव्य के उत्तम पद्यों से स्तुति कर समुद्रगा नदीको प्रसन्न किया

तब नदी की अधिष्ठात्री देवता प्रसन्न हो इन्हें बर दिया कि मैं तुम्हारी स्तुति से अतिप्रसन्न हुई अब तुम्हारी मा को इतनी दूर आने का श्रम न करना पड़ेगा। कल भोर को नदी तुम्हारे घरके पास ही बहने लगेगी। शंकर वीजन इत्यादि शीतलोपचार के द्वारा अपनी वृद्धा माता को किसी तरह चैतन्य कर घर लाये भोर को सबों ने नदी इन के घर के समीप बहतें हुये देख बड़े अचंभित हुये। इत्यादि इनकी अद्भुत करामातें सुन केरल देश के राजा राजशेखर ने अपना मंत्री इनके पास भेज दर्शन की प्रार्थना किया। श्रीचरणों के दर्शन की आज्ञा पाय दस सहस्र सुवर्ण मुद्रा और अपने बनाये हुये तीन उत्तमोत्तम नाटक बाल रामायण विरथशाल भंजिका नाटिका और प्राकृति भाषा का कर्पूरमंजरी नाम का सट्टक इन को भेंट कर महाकवि की पदवी पाय सफल मनोरथ हो अपनी राजधानी को लौटा। शंकर अष्टम वर्ष में पहुंच, संन्यास धारण की आज्ञा मा से मांगा और सुतवत्सला माता की इच्छा इसके प्रतिकूल पाय एक दिन प्रवाहवती नदी के जांघ तक पानी में खड़े नहा रहे थे कि एक घड़ियाल पांव पकड़ खींचने लगा। लोगों से इसका समाचार पाय मा नदी के तट पर आ विलख २ रोती हुई कहने लगी बेटा! तुम अनाथ विधवा को छोड़ कहां चले जाते हो मैं अब किसको हार लगूंगी। शंकर बोले मा घड़ियाल मुझे अभी ही यह छोड़ सकता है यदि तुम मुझे अब भी सन्यस्त हो जाने की आज्ञा दो। माने अपने पुत्र की लोकोत्तर शक्ति देख विचारा यदि यह जीता रहेगा तो संन्यासी होने पर भी इसका मुखचन्द्र देख नयनों की प्यास तो बुझाती रहूंगी सुरधाम सिधार गया तो उससे भी वंचित रहूंगी कहा तो लाचारी है जो तेरी इच्छा हो। संन्यास के लिये माता से आज्ञा पाय घड़ियाल से तुरंत पांव छुटवा मा के समीप आय बोले। अम्ब! कहो मैं अब तुम्हारा क्या प्रिय करूं ये बन्धु लोग जो मेरे पिता का धन लेंगे सब भांत तुम्हारी रखवाली करते रहेंगे और शरीर पात होने पर शास्त्र अनुसार तुम्हारी और्ध्वदैहिक सब क्रिया कर देंगे। मा ने कहा तुम्हारा संन्यासी होना तो मैं अङ्गीकार करी चुकी किन्तु मेरा शरीर पात होने पर जहां कहीं

तुम रहो तुम्ही आकर मेरा सब क्रिया कर्म करो नहीं तुम्हारा जन्म देने से मुझे क्या लाभ ! शंकर ने कहा मा निश्चय मानो जिस समय तुम मुझे याद करोगी रात हो चाहे दिन मैं चाहे जैसी अवस्था में रहूंगा तुरन्त आ उपस्थित हूंगा और शरीरपात होने पर मैं ही तुम्हारी क्रिया कर्म भी कर दूंगा। यह कदापि मन में न लाओ कि यह विधवा मा को छोड़ संन्यास धारण कर चला गया बरन तुम्हारे पास रह जो उपकार करता उससे सौगुना अधिक उपकार मैं करूंगा। आंसू बहाती हुई मा को इस तरह आश्वासन दे इस के सन्तोष के लिये घर से थोड़ी दूर पर एक विष्णु मन्दिर में संन्यासी हो जा रहने लगे। यहां कुछ दिन रह मा से आज्ञा पाय देशाटन के लिये केवल दण्ड और कमण्डलु अपने साथ ले रात ही को पश्चिम दिशा की ओर पधारे और अनेक देश, नगर, वन, पर्वत में घूमते हुये जीवमात्र में ब्रह्म की बुद्धि रख गौड़ पाद के शिष्य गोविन्द नाथ के आश्रम में पहुंचे। जहां के वृक्षों को देख मालूम होता था कि यह किसी महात्मा का आश्रम है वहां के संयमी मुनिगण इन्हें गोविन्दनाथ की गुफा के पास लेगये। शंकर तीन बार उस गुफा की परिक्रमा कर प्रणतांजलि हो गोविन्दनाथ की स्तुति करने लगे। शेषशायी गरुड़ध्वज विष्णु भगवान् की पर्यङ्कता को धारण किये जो अपने शिष्य परंपरा पर कृपा कर जगत् के उपकार के लिये पतंजलिमुनि हुये उपरान्त अब इस शरीर में प्रगट हो व्यास पुत्र शुकदेव के शिष्य गौड़पाद से ब्रह्म विद्या का अभ्यास कर उस के संस्थापन को गोविन्दनाथ कह लाये मैं आपको बार २ प्रणाम करता हूं। इनकी यह स्तुति सुन समाधि से चित्त हटाय गोविन्द नाथ ने पूछा आप कौन हो। शंकर ने उत्तर दिया मैं न पृथ्वी हूं न जल हूं न तेज हूं न वायु हूं न आकाश हूं न इन पांचो के गुण शब्द स्पर्श रूप रस गन्ध हूं न इन गुणों की ग्रहण करने वाली इन्द्रियां हूं इन सबों से जो बच गया वही शिवरूप शुद्ध चैतन्य मैं हूं। उपनिषद् और वेदान्त विद्या का सार यह इनका उत्तर सुन गोविन्दनाथ बोले हम समाधि दृष्टि से देख इस बात को जान गये कि तुम साक्षात् सदाशिव के अवतार शंकर नाम से प्रगट हुये हो। शंकराचार्य ने तब संप्र-

दाय के परि-पालन निमित्त और ब्रह्मविद्या की प्राप्ति के लिये इनके चरण कमलों की पूजा कर इन्हें अपना गुरू बनाया । गोविन्दनाथ ने भी इनकी गुरुभक्ति और सेवा से प्रसन्न हो चारो वेद का सार ब्रह्मविद्या का उपदेश किया और वेदान्त सूत्र पर भाष्य बनाने की आज्ञा दे काशी जाने के लिये कहा तब यह गुरू की आज्ञा पाय उनके चरण पंकज को मन मानस में रख प्रणाम कर वहां से काशी को पधारे।

एक दिन मध्याह्न के समय शिष्यों के साथ गंगास्नान को जाते हुये एक डोम को चार भयानक शिकारीकुत्तों को साथ लिये रास्ता रोके खड़ा हुआ देख उसका स्पर्श बचाने के लिये रास्ते से हट जाने को कहा। डोम बोला "एकमेवाद्वितीयम्" "एषआत्मा अपहतपाप्मा" "निरवद्यं निरंजनम्" "असंङ्गोयं पुरूषः"— "सत्यं ज्ञानमनन्तंब्रह्म" "विज्ञानमानन्दम्" "अर्थात् यह आत्मा एकही और अद्वितीय है। यह आत्मा पाप रहित है अनिन्द्य और अविनाशी है। वह पुरुष संग रहित है। ब्रह्म जिसका अन्त नहीं है सत्य और ज्ञानरूप है आत्मा ज्ञान मय आनन्द रूप है इत्यादि सैकड़ों श्रुति वाक्यों के जागरूक रहते तुम ऐसे प्रसिद्ध वेदान्ती को ब्राह्मण और चाण्डाल में भेद की कल्पना आश्चर्य है । मुझे निश्चय हो गया कि दण्ड कमण्डलु धरे काषाय वस्त्र पहने बोलने में पटु पर ज्ञान का लेश भी नहीं रखते भेष मात्र से ये धूर्त गृहस्थों को ठगा करते हैं। जो तुमने कहा दूर हट सो यह देह को हट जाने के लिये कहा या आत्मा को जो देह में विद्यमान है। मैं पवित्र शुद्ध कुल में उत्पन्न ब्राह्मण हूं तू महा नीच की जाति डोम है यह झूठा आग्रह तुम को क्यों है ?- इस बात को तुम क्यों नहीं देखते कि वह पुराण पुरुष एक ही है जो घट २ में व्याप्त है। अचिन्त्य, अव्यक्त, अनन्त, निर्विकार उस परब्रह्म का स्वरूप मोह में आय भूले हुये इस क्षणिक कलेवर में अहंभाव तुमको क्यों है। विद्या पढ़ कर भी मुक्ति का मार्ग छोड़ तुच्छ लोकैषणा तुमको क्यों लगी हुई है ? अचरज है कि उस परमेश्वर के माया जाल में महान् लोग भी फँसे हुये हैं।

महानीच अंत्यज की ये बातें सुन शंकर विस्मित हो भेद बुद्धि त्याग बोले आत्मज्ञानी तुम्हारे में मैं अंत्यज की बुद्धि त्याग करता हूं। परमात्मा सब जीवमात्र में व्याप्त है जिसे यह दृढ़ निश्चय है वह चाण्डाल हो या ब्राह्मण हो वन्दना के योग्य है। विष्णु से लेकर फतींगे तक में आत्मा व्याप्त है यह बुद्धि जिसे है वह डोम भी मेरा गुरू है। उपरान्त वह डोम साक्षात् सदा शिवरूप हो अनेक आशीर्वाद के उपरान्त कहने लगा। मैं तुम से अत्यन्त प्रसन्न हूं तुम वेदान्त सूत्रों का भाष्य बनाय सांख्य और कणाद के मत के अनुयायी तथा दूसरे लोगों का जो भ्रम में पड़ वेदान्त सूत्रों का उलटा अर्थ करते हैं उनका खण्डन करने में सब भांत समर्थ होगे तुम्हारे भाष्य को मनुष्य की क्या देवता भी आदर करेंगे। ब्रह्म और जीव में भेद अभेद वादी भास्कर, परम शाक्त अभिनव गुप्त, ब्रह्म और जीव में भेद के मानने वाले महाशैव नीलकण्ठ, प्रभाकर, मीमांसकों के परमाचार्य मण्डन आदि पण्डितों को जीत अद्वैत महाविद्या का जगत् में प्रचार तुम्हीं कर सकोगे। यह कह सदाशिव अन्तर्ध्यान हो गये शंकर भी शिष्यगण सेवित गंगा स्नान को गये। उपरान्त मार्ग के सब तीर्थों की यात्रा करते हुये बदरिकाश्रम को पधारे तहां एकान्त स्थान में कुछ दिन वास कर वेदान्तसूत्र भगवद्गीता सनत्सुजातीय और नृसिंहतापिनी पर भाष्य रचा इस समय तक इन की १२ वर्ष की अवस्था होगई थी। सिवाय इसके उपदेश सहस्री इत्यादि और बहुत से ग्रन्थ रचे जिन ग्रन्थों को पढ़ कर या सुन कर अविवेक के बन्धन से मुक्त हो यती सन्यासी परमानन्द देने वाली शान्ति लाभ करते हैं। बदरिकाश्रम में एक वर्ष ठहर पद्मपाद आदि प्रधान शिष्यों को अपना बनाया शारीरक भाष्य तथा दूसरे ग्रन्थों को तीन बार पढ़ाय फिर काशी लौट आये और उस समय के काशी के प्रधान और प्रसिद्ध पण्डित भास्कर अभिनव गुप्त मुरारि मिश्र विद्येन्द्र प्रभाकर आदि दार्शनिकों को वाद में परास्त करते देख काशी के लोग इस बालक की लोकोत्तर बुद्धि पर अचरज में आये। एक दिन गंगा जी के तट पर शिष्यों को पढ़ा रहे थे अनेक शंकाओं का समाधान करते मध्याह्न

हो गया, थक भी गये थे ज्योंही उन शिष्यों की सन्ध्या पूरी कर उन्हें विसर्जन किया चाहते थे कि एक ब्राह्मण ने बूढ़े के रूप में शंकर से जाकर पूछा तुम कौन हो और यह क्या पढ़ा रहे हो । शिष्यों ने उत्तर दिया यह हमारे पूज्यपाद गुरू हैं इन्हीं ने समस्त उपनिषदों का सार शारीरिक सूत्रों का भाष्य रचा है और वही हम लोगों को पढ़ा रहे हैं । बूढ़ा बोला शारीरक सूत्रों का भाष्य करना साधारण बात नहीं है हमें कैसे विश्वास हो अच्छा तो कुछ कहो हम सुनै कैसा भाष्य तुम्हारे गुरू ने किया है । । शंकर खुद आप बोल उठे शारीरक सूत्रों के अर्थ जानने वाले गुरुवरों को अनेक प्रणाम है उन सूत्रों को भाष्यकार होने का मुझे अभिमान नहीं है तथापि आप जो पूंछे उसे मैं कहूं । तब उस वृद्ध ने इन से तृतीय अध्याय के आरम्भ में "तदन्तरप्रतिपत्तौ रंहति संपरिष्वक्तः प्रश्ननिरूपणाभ्याम्" इस सूत्र की वाख्या करने को कहा—भाष्यकार शंकर ने उत्तर दिया—इन्द्रियों के नाश होने पर अर्थात् देह का जब विनाश हो जाता है तब आत्मा देह का बीज भूत सूक्ष्म से आवेष्टित हो देहान्तर में जाता है। तागड्य ब्राह्मण की श्रुति में गौतम और जाबालि के प्रश्नोत्तर से यह बात सिद्ध और प्रमाणित है। शंकर के इस व्याख्यान को उस वृद्ध ब्राह्मण ने अपनी अद्भुत वावदूक शक्ति से सौ तरह से खण्डित किया शंकर ने भी इसके खण्डन में हज़ारों दोष निकाल अपने व्याख्यान का फिर मण्डन किया। इस तरह पर इन दोनों में बराबर आठ दिन शास्त्रार्थ और खण्डन मण्डन होता रहा । नवें दिन विवाद आरम्भ होने पर पद्मपाद ने अपने गुरू को चेताया कि सम्पूर्ण वेदान्त के रहस्य जानने वाले ये व्यासदेव हैं जो नारायण की अंशकला हैं और आप भी शिव के अवतार शंकर हो तब यह विवाद कल्प पर्यन्त भी काहे को कभी समाप्त हो सकता है । पद्मपाद के चेताने पर शंकर भक्ति से पुलकित गात्र हो व्यासदेव की बहुत सी स्तुति कर बोले आप के शिष्य प्रशिष्य की योग्यता भी अपने में न रख जो मैंने आप के शारीरक सूत्रों के भाष्य करने का साहस किया इस मेरी धृष्टता को क्षमा कीजिए यह कह भाष्य उनके अर्पण किया । व्यास जी पुस्तक

ले उसे प्रत्येक स्थल में जहां २ गूढ़ अर्थ रक्खे गये थे सबको अच्छी तरह देख और विचार कर बोले । कौन कहेगा कि यह तुमने साहस किया है तुम तो कोई महानुभाव महापुरुष मालूम होते हो हमारे गूढ़ार्थों को विशद करने की पाण्डित्य शक्ति सिवाय तुमारे और किस्में थी जो उनको स्पष्ट करता अब तुम इसे पढ़ो पढ़ाओ और जगत् में प्रचार करो। यह तुम्हारा भाष्य सर्वसम्मत होगा तुम्हारा सब भांत मङ्गल हो अब मैं तुमसे बिदा होता हूं । शंकर विनीतभाव से प्रणाम कर फिर बोले । आपकी कृपा से यह भाष्य प्रचलित हो चला है और पण्डित मण्डली में सर्वसम्मत भी है इस्का सहारा ले मैं अनेक वादियों को भी ध्वस्त कर चुका हूं अब एक यह प्रार्थना है कि आप मुहूर्तमात्र और यहां ठहरें जब तक मणिकर्णिका में मैं अपना शरीर आपके सामने त्याग आयुष्य का अन्त करूं । व्यासदेव ने कहा अभी यह अद्वैतवाद के प्रतिकूल वादी अपनी पूरी प्रौढ़ता को नहीं पहुंबा अभी इसकी अत्यन्त बाल्यदशा है इस लिये तुम जननी के समान हो इस्का पोषण कुछ दिनों तक और करो। बहुत से अद्वैतवाद के प्रतिकूल वादी मत्तगयन्द से चिग्घार रहे हैं जब तक वे निरस्त न हों तब तक तुम्हारा इस पृथ्वी तल में वास करना अत्यन्त उपयोगी है। तुम्हें १६ वर्ष हुए हैं अभी १६ वर्ष आप और रहें और उपनिषदों का भी भाष्य रचें यद्यपि विद्वानों ने उनका भाष्य रचा भी है परन्तु जो मेरा हृदय है वह तुम्ही उन्में प्रकाश कर सकोगे । हम आशीर्वाद देते हैं कि तुम्हारे किये भाष्य संसार में जब तक सूर्य चन्द्रमा रहैं तब तक प्रतिष्ठा पाते रहैं । यह कह वह वृद्ध अन्तर्ध्यान हो गया और शंकर ने भी इसके उपरान्त दिग्विजय की इच्छा से शारीरक सूत्र के वार्तिककार कुमारिल भट्ट से मिलने को दक्षिण दिशा की ओर प्रस्थान किया । पहले प्रयाग पहुंच गंगा और यमुना के संगम में स्नान किया यहां यह सुना कि कुमारिल ने शास्त्रार्थ में अपने गुरु को परास्त किया था इस लिये गुरू की अवज्ञा जनित दोष से मुक्त होने को तुषानल में प्रवेश कर रहे हैं । जल्द उस स्थान में गये जहां कुमारिल चिता के बीच बैठे हुये थे। फूस की आग

चारो ओर दधक रही थी और प्रभाकर मुरारि मिश्र इत्यादि तुषानल के सब ओर खड़े रो रहे थे, कुमारिल का सर्वाङ्ग जल गया था केवल मुख मात्र खुला था। अत्यन्त प्रसन्न हो बोले आप ऐसे महात्मा का दर्शन विशेष कर मेरी मरण अवस्था में बड़े पुण्य का उदय है असार संसार सागर में डूबते हुओं को आप सरीखे उदारचित्त महात्माओं का सत्संग ही उसके पार जाने को नौका है। तब शंकर ने अपना भाष्य कुमारिल को दिखलाया। यह उसे देख बोले मैंने भी शारीरक सूत्रों के आठ सहस्त्र वार्तिक बनाये हैं यदि तुषानल में प्रवेश न किये होते तो उन वार्तिकों को आपके बनाये भाष्य में समावेशित कर देते। आपका यह प्रबन्ध बहुत उत्तम रचा गया है कर्मकाण्ड और ज्ञानकाण्ड दोनों का विधिवत् निर्णय इसमें किया गया है और नैयायिकों की युक्ति का भी अच्छी तरह खण्डन इसमें है। बौद्धों से वेदमार्ग को लुप्त होता देख मैंने उसके शास्त्रों को पढ़ पीछे उन से शास्त्रार्थ कर वाद में उन्हें परास्त कर फिर से वेदमार्ग का प्रचार करवाया तो, किन्तु गुरुनिन्दा का पाप मेरे अन्तरात्मा को डंक सा मार रहा था। दूसरे यह कि जैमिनि प्रणीत मीमांसा शास्त्र में अभ्यास कर मैंने ईश्वर का भी निराकरण किया। इन दो पापों के दूर करने को तुषानल में प्रवेश ही मैंने प्रायश्चित समझा पर अब आपका दर्शन पाय मैंने उन दोनों पापों से सहज ही में मुक्ति पाई तब यह तुषानल प्रवेश निरर्थक है। मैंने जब सुना कि आपने भाष्य बनाया है तब मेरी इच्छा हुई की शावर भाष्य पर जैसा वृत्ति मैंने रचा है वैसा तुम्हारे शारीरक भाष्य पर भी रच पण्डितों में प्रतिष्ठा का अधिकारी हूं किन्तु अब उसका चरचा चलाना भी व्यर्थ है। शंकर कुमारिल की ये बातें सुन बोले यह हम जानते हैं कि बौद्धों के संहार के लिये साक्षात् स्वामिकार्तिक आप प्रगटे हो उन दोनों पातकों की कहीं सम्भावना भी तुम्हारे में नहीं है तब तुषानल में आपका प्रवेश केवल धर्म की शिक्षा के लिये है। यदि आप कहें तो कमण्डलु के जल से सींच मैं आप को जिला दूं और आप की इच्छा है तो मेरे भाष्य पर वृत्ति रचिये कुमारिल ने फिर कहा—हे अर्हत्तम ! मैं जानता

हूं आप अद्वैतवाद के स्थापन के लिये प्रगट हुये हो थोड़ा पहिले आये होते तो पाप से छुटकारा पाने को मैं तुषानल में प्रवेश न करता। मेरे भाग्य में यह नहीं था कि शावर भाष्य की भांत आप के भाष्य पर भी कुछ लिख प्रतिष्ठा पाता मैं जानता हूं आप महायोगी हो, मरे हुये को भी जिला देने में समर्थ हो तो मैं तो अभी सजीव हूं। अब ऐसा ही होने दीजिये मैं तुषानल में प्रवेश का संकल्प कर चुका हूं तो उसे मिथ्या नहीं किया चाहता। अब आप तारकब्रह्म का उपदेश कर मुझे कृतार्थ कीजिये और दिगन्तविश्रान्त यश स्थापन के लिए मण्डन मिश्र को जाकर जीतिये। वह पृथ्वीतल में विश्वरूप इस नाम से प्रसिद्ध है वैदिक कर्म में तत्पर कर्मकाण्ड के लिये बड़ा हठी है प्रवृत्तिशास्त्र में लगा हुआ बड़ा कर्मकाण्डी है। निवृत्तिमार्ग का बड़ा विरोधी है उसे किसी तरह अपने बश में लाइये उसकी स्त्री सरस्वती साक्षात् सरस्वती महा पण्डिता है उसे मध्यस्थ कर मण्डन को बाद में परास्त कीजिये। थोड़ा ठहरिये जब तक मैं आप का चरण पंकज अपने हृदय में धारण कर आप का स्वरूप देखते हुये इन प्राणों का अन्त करूं। कुमारिल की इच्छा पूरी कर और तारक महामन्त्र के उपदेश से वैष्णवों की गति उन्हें दे शंकर स्वामी वहां से मण्डन की ओर सिधारे।

माहिष्मतीपुरी में पहुंच मण्डन मिश्र का पता पूछते हुये घर के समीप मार्ग में मण्डन की दासी को जल के लिये जाते हुये देख उस से पूछा मण्डन का घर कहां है? दासी ने उत्तर दिया द्वार पर जहां पिंजड़ों में तोता मैना परस्पर यह विवाद करते हों कि वेद स्वतः प्रमाण हैं या वेद का ईश्वर वाक्य होना किसी दूसरे प्रमाण की आकांक्षा रखता है। सुख दुःख आदि कर्म का फल मनुष्य को अपने कर्म के अनुसार मिलता है या उसका देने वाला कोई अजन्मा सर्वज्ञ कर्तुमकर्तुमन्यथाकर्तुं समर्थ सर्वशक्तिमान् ईश्वरपद वाच्य है। यह जगत् कर्म की अनादि धारा के अनुसार प्रवाह रूप से नित्य है या कोई इसका उत्पन्न करने वाला है इत्यादि विवाद जहां तोता मैना में होते देखो उसे मण्डन का घर जानो।

स्वतःप्रमाणं परतःप्रमाणं कीराङ्गना यत्र गिरं गिरन्ति ।
द्वारस्थनीडान्तरसन्निरुद्धा जानीहितन्मण्डनपण्डितौकः॥
फलप्रदं कर्मफल प्रदोऽजः कीराङ्गना यत्र गिरं गिरन्ति ।
द्वारस्थनीडान्तरसन्निरुद्धा जानीहि तन्मण्डन पण्डितौकः॥
जगद्ध्रुवं स्याज्जगदध्रुवंस्यात्कीराङ्गना यत्र गिरं गिरंति।
द्वारस्थनीडान्तर सन्निरुद्धा जानीहि तन्मंडनपंडितौकः

दासी के बताये हुए पहिचान के अनुसार द्वार पर जा द्वार बन्द देख भीतर जाना सब भांत असम्भव जान योगबल द्वारा आकाश मार्ग से मण्डन के घर के अंगने में जा उतरे और मण्डन को श्राद्ध के लिए बैठा हुआ जैमिनि और व्यास को अवनेजन देता हुआ देखा। मण्डन श्राद्ध के समय गेरुआ वस्त्र पहिने सन्यासी का निषिद्ध दर्शन समझ क्रोध में भरा हुआ बोला।

कुतो मुण्डयागलान्मुण्डी पन्थास्ते पृच्छ्यते मया ।
किमाह पन्थास्त्वन्माता मुण्डेत्याह तथैवहि ॥

घर के द्वार का कपाट बन्द रहने पर भी श्राद्ध के समय अयोग्य दर्शन तू किस रास्ते से आया ।

शंकर–कुतः” “इस पद का अर्थ बदल कर बोले (कुतः अर्थात् कहां तक तू ने मुड़ाया है) मैं गले तक मुड़ाकर मुण्डी हुआ हूं ।

मण्डन–(यह जान कि इसने हमारे प्रश्न को नहीं समझा फिर बोला) मैं पूछता हूं किवाड़ बन्द थे तू किस रास्ते से आया ।

शंकर–सब लोग इस संसार में किस रास्ते से आते हैं यह तुम अपनी मा से जाकर पूछ आओ ।

मण्डन–(इनके उत्तर का मर्म न जान फिर बोला) मैं रास्ता पूछता हूं तू कहता है तेरी मा मुण्डी है ।

शंकर–तेरी मा मुण्डी है तो हो।

मण्डन–अही पीता किमु सुरा नैव श्वेता यतः स्मर।
किं त्वं जानासि तद्वर्णमहं वर्णं भवान् रसम्॥

क्या तू ने "सुरापीता" मद पिया है?

शंकर–("पीता" इस शब्द पर आक्षेप कर उत्तर दिया) पीता अर्थात पीली रंग की मद तूने पिया है श्वेत रंग की नहीं?।

मण्डन–याद कर किस रंग की मद तूने पिया।

शंकर–रंग हम जान सक्ते हैं पर उसका रस स्वाद तुम।

मण्डन–अरे! एक गदहे का बोझ कन्था (गुदड़ी) तो लादे है शिखा और जनेऊ से तुझे कौनसा बोझ था जो उसे त्याग दिया?।

शंकर–मूढ़! तेरे बाप से भी न उठ सकै सो गुदड़ी तो मैं धारण किये हूं किन्तु शिखा और जनेऊ श्रुतिओं को बोझ था नहीं तो श्रुति ने क्यों आज्ञा दिया जिस दिन वैराग्य मन में स्थान करले उसी दिन शिखा सूत्र त्याग सन्यास धारण करले।

"यदहरेव विरजेत्तदहरेव प्रव्रजेत्" "ब्रह्मचर्याद्वा गृहाद्वा बनाद्वा" "न कर्मणा न प्रजया न धनेन वा त्यागेनैकेन अमृतत्वमानशुः"–"अथ परिव्राड्विवर्णवासा मुण्डोऽपरिग्रहः"

मण्डन–सात भांवर की पाणिगृहीतीभार्या के भरण पोषण में सब भांत असमर्थ शिष्य बेचारों पर पुस्तक का बोझ लदवाने के लिए तू ब्रह्मज्ञानी हुआ है।

शंकर–चिरकाल तक गुरुकुल में बास और गुरुसेवा का अनेक क्लेश सहना दुर्घट समझ ब्रह्मचर्य जल्द समाप्त कर स्त्री की सेवा में तत्पर रहने ही से तू भी क्या कर्मकाण्डी हुआ है।

मण्डन—दरवाज़े के डेहुरीदार पहरुओं को धोखा दे तू क्यों यहां चोरों के समान घुस आया ।

शंकर—तू भी भिक्षुकों को बिना अन्न दिये चोरों की तरह क्यों भोजन करता है ।

मण्डन—शान्त शील सूक्ष्मबुद्धि विरक्तों के योग्य कहां ब्रह्म का विचार कहां तू ऐसा चपल निपट अज्ञान । मैं समझता हूं जीभ के स्वाद के लिए सन्यासी का भेष तूने धर लिया है ? ।

शंकर—श्रद्धालु और शुद्धचित्त वालों से करने योग्य स्वर्ग के साधन कहां यज्ञादिक वैदिक कर्म; कहां महामदान्ध दाम्भिक कुटिल चित्त तेरा यह व्यर्थ का वाग्वाद—मालूम हुआ संसार के विषय सुखों के स्वाद के लिये यह सब ढङ्ग तू ने रच रक्खा है ।

मण्डन—बिना बुलाये तू क्यों हमारे घर आया ? ।

शंकर—हम अतिथि के भेख में विष्णुरूप हो तुझे कृतार्थ करने आये हैं ।

दोनों में इस तरह देर तक वाक् कलह के उपरान्त जैमिनि का इशारा पाय व्यासदेव बोले—मण्डन रागद्वेष विहीन इस महात्मा आत्मज्ञानी के प्रति तुम्हारा यह आचरण सर्वथा अयोग्य है । अभ्यागत विष्णुरूप होते हैं तुम इन्हें भिक्षा दे प्रसन्न करो और अपराध क्षमा कराओ—व्यासदेव की आज्ञा पाय मण्डन ने आदर के साथ शंकर से भिक्षा के लिये प्रार्थना किया । शंकर ने इसे शान्त और विनीत देख कहा मैं तुम से विवाद भिक्षा चाहता हूं और विवाद भी इस प्रण "शर्त" के साथ कि जो शास्त्रार्थ में हारे वह शिष्य होजाय ।

मण्डन—मैं अपना अहोभाग्य मानता हूं जो आप मुझ से शास्त्रार्थ की प्रार्थना करते हैं कल मध्याह्न में हमारा और आप का शास्त्रार्थ होगा । इस समय भिक्षा कर मुझे कृतार्थ कीजिये महर्षि व्यास और जैमिनि विवाद में हम दोनों के जय पराजय का निर्णय करने वाले होंगे ।

शंकर—हमारी ओर से सरस्वती जो सरस्वती का अवतार है और इस समय तुम्हारी धर्म पत्नी है विवाद का निर्णय करने वाली हो ॥

दूसरे दिन पण्डितों की सभा में शिष्य समेत मण्डन आ उपस्थित हुये और पति की आज्ञा पाय सरस्वती भी वहां आ सुशोभित हुई। फूलों की एक२ माला दोनों के गले में पहिनाय बोली जय पराजय की पहिचान यही माला होगी। मैं अपने पति और इस भिक्षुक के लिये भोजन सिद्ध करने जाती हूं पर नित्य इसी तरह माला पहिना दिया करूंगी माला के फूलों का कुम्हला जाना ही पराजय की पहिचान होगी। दिन२ पण्डितों की मण्डली बढ़ती ही जाती थी शास्त्रार्थ के समय दोनों पद्मासन होकर बैठते थे दोनों ने प्रसन्न मुखारविन्द एक दूसरे के हराने को क्रोध या वाक् छल को अलग कर दिया था। मध्याह्न होने पर सरस्वती दोनों को भोजन करा जाती थी पांच या छः दिन बराबर इसी क्रम पर दोनों में बाद होता रहा—अनेक भिन्न२ विषयों पर शास्त्रार्थ के उपरान्त मण्डन ने पूछा यतिराज? आप जो जीव और ब्रह्म में अभेद मानते हैं और उसमें भी ब्रह्म को नित्य शुद्ध बुद्ध उदासीन मानते हो सो क्योंकर सङ्गत हो सक्ता है। क्योंकि जब ब्रह्म में कर्तृत्व भोक्तृत्व गुण नहीं है तो कर्तृत्व-भोक्तृत्वविशिष्ट जीव के साथ उसका अभेद कैसे निभ सक्ता है। जो श्रुतियां इसमें प्रमाण देते हो वे केवल भूतार्थ सत्य बात की प्रतिपादिका मात्र हैं। भूतार्थ प्रत्यक्षादि प्रमाण सापेक्ष्य है इस लिये जीव और ब्रह्म का अभेद युक्ति रहित होने से प्रमाण के योग्य नहीं है।

शंकर—"तत्त्वमसि श्वेतकेतो" इत्यादिक श्रुतियों में जो उद्दालक आदि महर्षियोंने शिष्य श्वेतकेतु को उपदेश किया है कि हे श्वेतकेतो! वह आत्मा या ब्रह्म तुम्ही हो—ऐसा ही जनक के प्रति याज्ञवल्क्य ने भी कहा है:—

अभयं वै जनक! प्राप्तोसि तदा आत्मानमेवावेद अहम्ब्रह्मास्मीति तस्मात्तत्सर्वमभवत्। तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः—

हे जनक! जब तुम को यह ज्ञान होगया कि हमी वह हैं तब तुमको फिर किसी तरह का भय न रहा—जो सब को एक देखते हैं उनको

मोह या शोक कहां। प्रत्यक्ष प्रमाण के अतिरिक्त शब्द प्रमाण न मानने में कौनसी तुम्हारी हानि है।

मण्डन—यद्यपि तत्त्वमसि इत्यादि वाक्यों से सिद्ध होता है कि ब्रह्म और जीव में अभेद है किन्तु यह अभेद केवल स्तुति के ढंग पर है।

शंकर—यह क्रम कर्मकाण्ड का है ज्ञानकाण्ड का नहीं। निन्दा और स्तुति से जब तक ग्लानि और प्रसन्नता लगी है तब तक ज्ञान का प्रकाश होना दुर्घट है। जब पूर्णज्ञान मन में स्थान पाता है तब मनुष्य जीव और ब्रह्म में अभेद स मझने का अधिकारी हो सक्ता है। इस प्रकार शंकर मण्डन को बराबर बाद में परास्त करते रहे। शंकरदिग्विजय में जो दोनों का विवाद विद्यारण्य ने लिखा है उससे निश्चय होता है कि शंकराचार्य ही की सामर्थि रही कि मण्डन को बाद में परास्त किया। विद्यारण्य ने इस प्रकरण को ऐसे ढंग से लिखा है कि मीमांसा और वेदान्त में जिसे जितना ही अधिकार हो उसे उतना ही दोनों शास्त्रों के पाण्डित्य का रस मिल सक्ता है। अस्तु छठवें दिन सरस्वती आकर मण्डन के गले के हार का फूल कुम्हलाया हुआ देख जैसा शंकर को भिक्षा के लिये नित्य कहा करती थी उसी तरह मण्डन को भी उस दिन भिक्षा के लिये बुलाया और शंकर से कहने लगी दुर्वासा के शाप से मुझे मृत्युलोक में जन्म लेना पड़ा था मैं अब ब्रह्मलोक में जाती हूं आप का कल्याण हो। मण्डन के सदृश पृथ्वी पर दूसरा पण्डित इस समय नहीं है इसे तुम ने बाद में परास्त किया मानों समस्त भूमण्डल को जीत चुके।

सरस्वती की ये बातें सुन शंकर ने अरण्य दुर्गा के मन्त्रों से उसे बांध बोले भगवती मैं जानता हूं आप साक्षात सरस्वती हो किन्तु यह सेवक जब तक आप को जाने के लिये न कहै तब तक आप ठहरैं।

मण्डन बाद में अपने को हारा जान हठ छोड़ फिर बोला योगिराज! मीमांसा का खण्डन आप करते हैं तो जैमिनि महामुनि उस शास्त्र के निर्मा-ण में क्यों प्रवृत्त हुये महर्षियों के वाक्य क्यों कर झंठ हो सकते हैं—ऐसा

सन्देह करता हुआ मण्डन को देख शंकर फिर बोले जैमिनि महर्षि का वाक्य कहीं पर मिथ्या नहीं है किन्तु हमलोग उन वाक्यों का आशय न समझ उनका उलटा अर्थ कर रहे हैं। पटुबुद्धियों को भी ब्रह्म के सूक्ष्म विचार में असमर्थ जान ब्रह्म के प्राप्ति का साधन केवल सुकृत और पुण्यातिशय जान कर्मकाण्डों के विधान के लिए जैमिनिने मीमांसा शास्त्र बनाया—कर्मकाण्ड के सम्यक् विधान करने से जब अन्तरात्मा पवित्र होता है तो उसके लिए ब्रह्म की प्राप्ति फिर दुर्घट नहीं रह जाती। इस लिए मीमांसाशास्त्र वेदान्त का अधिकारी कर देने का अङ्ग है न कि प्रधान शास्त्र जैसा तुम लोगों ने अब तक समझ रक्खा था। इस विषय में मण्डन ने जो २ शंकायें की उन सबों का शङ्कर बराबर समर्थन करते गये। कई एक प्रश्नों में मण्डन का एक यह भी प्रश्न था कि यदि जैमिनि को परमेश्वर का सच्चिदानन्द होना स्वीकार था तो परमेश्वर से भिन्न कर्म को सुख दुःख आदि शुभ अशुभ कर्म का फल देने वाला मान परमेश्वर नहीं है ऐसा कह उसका निराकरण उन्होंने क्यों किया? शङ्कर ने कहा। कार्य कारण वादी कणाद का मत है कि जैसा घट से हम उस घट के बनाने वाले का अनुमान कर लेते हैं इसी तरह कार्य रूप इस जगत् को देख कारण रूप इसके बनाने वाले परमेश्वर का हम अनुमान करते हैं। जैमिनि ने इस तरह पर परमेश्वर की सत्ता या अस्तित्व मानने वाले वैशेषिक के आचार्य कणाद को उत्तर दिया है न कि श्रुतियों में प्रतिपादित ईश्वर के निराकरण में उनका तात्पर्य है। उपनिषदों के अभ्यास से वह ब्रह्म जाना जाता है। अवेदवित् उसे किसी तरह नहीं जान सकते इसी तात्पर्य को पुष्ट करने वाली श्रुति भी हैं "तंत्वौपनिषदं पुरुषं पृच्छामि—नावेदवित् मनुते तं वृहन्तम्"—तो सिद्ध हुआ कि केवल अनुमानगम्य ईश्वर के खण्डन में जैमिनि का अभिप्राय है। इस गूढ़ अभिप्राय को न समझने वाले ही जैमिनि प्रणीत पूर्व मीमांसा शास्त्र को अनीश्वरवाद कहते हैं। जैमिन के हृदय का अभिप्राय शङ्कर के इस समाधान पर मण्डन सरस्वती और सभा में जितने लोग बैठे थे सब प्रसन्न हुये और उनकी गंभीर बुद्धि की प्रशंसा करने लगे। मण्डन पण्डिताई

का सब अभिमान त्याग शंकर का शिष्य हो घर गृहस्थी त्याग सन्यासी होने लगा । सरस्वती तब बोलीं मैं मण्डन की अर्द्धाङ्गिनी हूं जब तक। मुझे भी आप न हरा लें तब तक मेरा पति अभी आधा हारा है इस लिये हमें भी जीत तब पति को आप सन्यासी कर सकते हैं ।

शंकर—स्त्रियों से विवाद सदाचार के विरुद्ध है किन्तु अपना सिद्धान्त खण्डन करने में प्रवृत्त स्त्री जाति हो वा दूसरा कोई हो उससे भी वाद करना अनुचित नहीं है । इसी लिये ब्रह्मविद्या के विचार में याज्ञवल्क्य ने गार्गी से विवाद किया । जनक राजर्षि सुलभा के साथ कलह में प्रवृत्त हुये । विचित्र उक्ति युक्तियों में दोनों का सात दिन तक बराबर शास्त्रार्थ होता रहा । सरस्वती ने शास्त्रों के वाग्जाल में इन्हें कहीं पर किसी अंश में कच्चा न पाय सोचा कि यह बाल्य अवस्था ही से सन्यासी हुये हैं इस लिये सर्वज्ञ होकर भी ये रस का विषय काम शास्त्र में सब भांत अपरिपक्व हैं तो उस विषय में इनसे बाद करने में पार ले जा सकती हूं । पूंछा बताइये पुष्पधन्वा कामदेव की कितनी कलायें हैं और उनका क्या२ स्वरूप है ? कृष्णपक्ष और शुक्लपक्ष में काम की कला पुरुष के किस अंग में रहती है और स्त्री के किस अंग में रहती है ? शंकर ने सोचा यदि मैं इस प्रश्न का उत्तर देने से इनकार करता हूं तो अल्पज्ञ होने का कलंक मुझे लगता है यदि उत्तर देता हूं तो यह संन्यासियों के धर्म के विरुद्ध होता है । बोले सुन्दरी एक महीने की अवधि यदि मुझे दो तो मैं कामशास्त्र में भरपूर निपुण हो इसका भी उत्तर आप को दे सकूंगा । तथास्तु ऐसा सरस्वती के अङ्गीकार करने पर शंकर योग बल से खेचरी मुद्रा के द्वारा शिष्य समेत आकाश में उड़ गये ; और आखेट को गया वृक्ष के नीचे बन में मोहवश बेहोश मृतक अमरू राजा को पड़ा हुआ ऊपर से देख पद्मपाद नामक अपने शिष्य से कहा । अमरू राजा सौन्दर्य सौभाग्य और रसिकता की सीमा है इसके सौ रानियां हैं जिस्से सिद्ध होता है कि यह कहां तक कामी है । मैं चाहता हूं इसी के शरीर में योगबल से प्रवेश कर काम शास्त्र की समग्र कला सीखूं ।

यह कह एक पर्वत की रमणीक शिलातल पर जा उतरे जहां स्वच्छ जल से भरा सरोवर और हरे भरे वृक्ष चारो ओर उस पर्वत की शिला को अधिक सोहावनी कर रहे थे। अपने शिष्यों को आज्ञा दिया मैं अब काम कला सीखने को अमरू राजा के शरीर में प्रवेश करता हूं तुम लोग मेरे शरीर की सावधानी से रक्षा करते रहो॥ इसके उपरान्त शंकर की वह देह मृतक हो गई। अमरू तत्क्षण जी उठा रानियां सब बड़ी प्रसन्न हुईं। मन्त्री लोग और पुरवासियों को बड़ा आनन्द हुआ सब बड़े अचरज में आये। अमरूशतक नाम का छोटासा एक खण्डकाव्य इस समय में इन्होंने रचा था जो मानो इस कथानक के सत्य होने की गवाही दे रहा है।

हारोऽयं हरिणाक्षीणां लुठति स्तनमण्डले।
मुक्तानामप्यवस्थेयं के वयं स्मरकिंकराः॥

दम्पत्योर्निशि जल्पतोर्गृहशुकेनाकर्णितं यद्वच-
स्तत्प्रातर्गुरुसन्निधौ निगदतस्तस्योपहारं वधू॥
कर्णालंकृतिपद्मरागशकलं विन्यस्य चंचूपुटे।
व्रीडार्ता प्रकरोति दाडिमफलव्याजेन वाग्बन्धनम्॥

एकत्रासनसंस्थितिः परिहृता प्रत्युद्गमाद्दूरत-
स्ताम्बूलानयनच्छलेन रभसा श्लेषोऽपि संविघ्नितः।
आलापोऽपि न मिश्रितः परिजनं व्यापारयन्त्यन्तिके,
कान्तं प्रत्युपचारतश्चतुरया कोपः कृतार्थीकृतः॥

सा पत्युः प्रथमापराधसमये सख्योपदेशं विना,
नो जानाति सविभ्रमाङ्गवलना वक्रोक्तिसंसूचकः।
स्वच्छैरच्छकपोलमूलगलितैः पर्यस्तनेत्रोत्पला,
बाला केवलमेव रोदिति लुठल्लोलैश्चलैरश्रुभिः॥

सा बालामप्यप्रगल्भमनसः सा स्त्री वयं कातराः,
सा पीनोन्नतिमत्पयोधरयुगं धत्ते सखेदा वयम् ॥
सा कान्ता जघनस्थलेन गुरुणा गन्तुं न शक्तावयम्
दोषैरन्यगुणाश्रितैरपटवो जातास्म इत्यद्भुतम् ॥
कोपस्त्वया यदि कृतो हृदि पंकजाक्षि,
सोऽस्तु प्रिये तव किमत्र विधेयमन्यत् ।
आश्लेषमर्पय मदर्पितपूर्वमुच्चैर्मह्यं समर्पय मदर्पित
चुम्बनंच ॥

इत्यादि थोड़े से उदाहरण इनकी प्रौढ़ कविता के यहां पर हम इसलिए उद्धृत किये हैं कि इससे संस्कृतसाहित्यविदग्ध जान सकते हैं कि कैसी सर्वाङ्ग सुन्दर कविता अमरूशतक की है। गोवर्द्धनाचार्य्य और बिहारी कवि ने इसी की छाया लेकर अपने २ काव्य रचे हैं बल्कि नैषध में श्रीहर्ष ने भी कई जगह अमरूशतक की छाया लिया है। रसनिरूपण और नायिका नायक भेद के ग्रन्थों में सबों ने उदाहरण में इसी के श्लोक दिये हैं।

इस समय अमरू के राज्य भर में कलियुग भी त्रेतायुग के समान मालूम होने लगा और अब राजकाज में तथा कामकेलि में अमरू की लोकोत्तर असाधारण पटुबुद्धि मन्त्री लोग और सब रानियां भी देख जान गईं कि कोई प्राप्तैश्वर्य सिद्ध योगी ने इसके शरीर में प्रवेश कर इसे जिला दिया है। अमरूशतक बनाने का ज़िकिर शंकरदिग्विजय में माधवाचार्य विद्यारण्य ने भी किया है।

वात्स्यायनप्रोदितसूत्रजातं तदीयभाष्यं च निरीक्ष्य सम्यक्।
स्वयं व्यधत्ताऽभिनवार्थगर्भं प्रबन्धमेकं नृपवेशधारी ॥

वात्स्यायन का कामसूत्र और उसका भाष्य अच्छी तरह देख भाल नवीन अर्थ गर्भित एक प्रबन्ध राजा के भेष में शंकर ने रचा।

मन्त्री और रानियों ने अपने प्रबन्धकर्ताओं को आज्ञा दे दी और जासूसों को भेज दिया कि तुम जहां कहीं मृतक शरीर पृथ्वी में पाओ उसे ढूंढ कर जलादो। एक महीने से पांच छः दिन अधिक बीत गये पर गुरु को अपने निज शरीर में प्रवेश होते न देख शिष्य सब बड़े शोच में आय विलाप करने लगे तब पद्मपाद उन सबों को समझाय बोला कि दुःख और विषाद त्याग एक चित्त हो यत्न करने से क्या २ नहीं होता। बराबर विघ्न पर विघ्न होने पर भी देवता लोग समुद्र मथने के प्रयत्न में लगे रहे अन्त में अमृत पीने में कृतकार्य हो ही गये। इसलिए हम सब लोग एक मन हो चल कर गुरु को ढूढें। यद्यपि उनका मिलना अति कठिन है किन्तु मनुष्यों में वे जहां कहीं होंगे अपने लोकोत्तर गुणों से न छिपे रहैंगे जहां वे होंगें वहां की प्रजा अति प्रसन्न रोग शोक रहित सब भांत सुखी होंगी। चारो वर्ण अपने २ वर्ण के काम में तत्पर होंगे पृथ्वी वहां की कामधेनु के समान फलती हुई मालूम होगी। पद्मपाद के इस परामर्श को सबों ने पसन्द किया और भेख बदल २ शिष्य सब अनेक बन पर्वत देश ढूंढते हुये अमरू के राज्य में जा पहुंचे यहां अमरू के फिर जी जाने की किंवदन्ती सुन और अमरू को पृथु दिलीप समान प्रकाशमान देख जान गये कि यही हमारे पूज्यपाद गुरु हैं। तरुणी में आसक्त गान सुनने के बड़े रसिक इन्हें पाय वीणा लै गाने वाले के भेख में अमरू की सभा में जा पहुंचे और निर्विघ्न राजसभा में प्रवेश पाय सौ रानियों के मध्य में तारागणों के बीच चन्द्रमा के समान भासमान देखा। राजा की आज्ञा पाय भौंरे पर छोड़ मारफ़त की गीत गाने लगे।

नेति नेत्यादिनिगमवचनेन निपुणं निषिध्य मूर्तामूर्तराशिम्। यदशक्यनिह्नवं स्वात्मरूपतया ज्ञानकोविदास्तत्त्वमसि तत्त्वम्॥

मूर्त अमूर्त यावत् पञ्चभूतात्मक जो इस संसार में शरीरवान् या अशरीरी हो कर इन्द्रियों के द्वारा प्रत्यक्ष हो सक्ते हैं अथवा जो इन्द्रिय गोचर पदार्थ नहीं हैं। उन सबों में नेतिनेति कह श्रुति जिसका निषेध करती है पर जगत् में जो विद्यमान् रहता हुआ निवारण नहीं किया जा सकता इस लिए विद्वान् लोग जिसे अपने स्वरूप में देख कर जान लेते हैं वह तत्त्व परमार्थ वस्तु तुम्हीं हो। इस तरह पर वीणा में शिष्यों ने गाया। "तत्त्वमसि तत्त्वम्" प्रत्येक श्लोकों के अन्त मे रख सकल वेदान्त और तत्त्वज्ञान का सारभूत सात श्लोक विद्यारण्य ने ऐसे लिखे हैं जिन्हें पढ ज्ञान का उद्धार हो आता है।

जिसमें परमार्थ तत्व वर्णन किया गया है ऐसी वीणा की गीत का तात्पर्य समझ और जिस प्रयोजन से राजा के देह में आये थे उसे भी सिद्ध देख शंकर ने तत्काल अमरू के शरीर को छोड़ दिया और वह देह फिर पहिले कासा मृतक होगया। यहां इन का शरीर जी उठा पर राजा के दूतों से चिता में उसे जलता पाय नृसिंह की स्तुति करने लगे।

लक्ष्मीपते कमलनाभ सुरेश विष्णो वैकुण्ठ कृष्ण मधुसूदन पुष्कराक्ष। ब्रह्मण्य केशव जनार्दन वासुदेव देवेश देहि कृपणस्य करावलम्बम्॥

इत्यादि १२ श्लोक बड़े ललित पदों में नृसिंह की स्तुति के हैं। नृसिंह जी की कृपा से चिता की आग तत्काल शान्त हो गई। शंकर अपने निज के शरीर में प्रवेश कर शिष्य समेत योग बल से आकाशचारी हो मण्डन के स्थान में जा पहुंचे। मण्डन ने इन को आया देख प्रसन्न चित्त हो इनके चरण कमलों पर साष्टाङ्ग प्रणाम पूर्वक गेह देह सब इन के अर्पण कर दिया। सरस्वती बोली आर्य मैं आप के पाण्डित्य और योगबल को सब भांत जानती थी फिर भी जो मैंने आपके साथ यह बिडम्बना किया उसे क्षमा कर अब मुझे निज धाम में पधारने की आज्ञा दीजिये।

शंकर ने सरस्वती को प्रणामपूर्वक विधिवत् पूजन कर कहा जगदम्ब ऋष्यश्रृङ्ग के स्थान में मैंने जो २ स्थान आप के कल्पित किये हैं उन में आप सदा सन्निधि रह शारदा के नाम से पूजकों के मनोरथ पूर्ण करती रहो। सरस्वती तथास्तु कह अन्तर्ध्यान होगई। मण्डन भी यज्ञ में जो कुछ पास था सब ब्राह्मणों को दे इनके शरणमें आया और इन्होंने इसे तत्वमसि महावाक्य का उपदेश कर संन्यासी कर लिया—इस तरह मण्डन को विवाद में परास्त और आत्मवेत्ता कर अनेक वन और पर्वतों की शोभा देखते हुये कामाक्षा में पधारे। वहां से महाराष्ट्र आदि देशों में अपने ग्रन्थों का प्रचार करते और मतमतान्तर का खण्डन करते हुये शिष्य समेत श्रीशैलनामक स्थान में गये। वहां से फिर मल्लिकार्जुन ज्योतिर्लिङ्ग की यात्रा करते हुये कृष्णानदी के प्रान्त देशों में गये और वहां पाशुपत वैष्णव तथा दूसरे २ चक्राङ्कित शूलाङ्कित, जुदे २ शिव वा विष्णु के उपासक आये उन सबों को सुरेश्वर और पद्मपाद आदि शिष्यों ने परास्त कर शारीरक भाष्य का उन में प्रचार करवाया। कितने अपना मत छोड़ शंकर के शिष्य होगये कितने मलिनचित्त इनको सब तरह पर क्लेश पहुंचाने के फिकिर में लगे। वहां से समुद्र के तट पर गोकर्णनाथ के स्थान में गये—उपरान्त दो सहस्र कुलीन वेदपारग शुद्ध ब्राह्मणों की वस्ती श्रीवलिनामक ग्राम में पहुंचे। वहां प्रभाकर नाम का एक बालक को लाय इनके चरण कमलों पर लुटा दिया। यह बालक राख में छिपी हुई आग के समान आकृति और चेष्टा में महाजड़ गूंगा और बहिरा था। पर स्वरूप और सौन्दर्य में प्रत्यक्ष कामदेव के समान; क्षमा और शान्ति में पृथ्वी का सा; दया और मार्दव आदि गुण विभूषित अपने मुख चन्द्र के प्रकाश से देदीप्यमान था—शंकर अपना हाथ इस बालक के शरीर के अङ्ग प्रत्यङ्ग पर फेर कृपा पूर्ण दृष्टि से देखते हुए बालक के पिता से इस लड़के का सब वृतान्त पूछा। पिता तब कहने लगा—स्वामिन् यह १३ वर्ष का हुआ यज्ञोपवीत संस्कार तो हमने किसी तरह इसका कर दिया पर यह अब तक

एक अक्षर भी नहीं जानता न बोल सका है । साथ के खेलवाड़ी लड़के खेल के लिए बुलाते हैं और जब नहीं जाता तो इसे बहुत सा पीटते हैं तौभी इसे कभी क्रोध नहीं होता । मनमौजी है जो मन में आया उसे कर गुज़रता है किसी के कहे सुने का नहीं है । खाने लगता है तो बराबर खाता ही रहता है रूठ गया तो कई दिनों तक बिना आहार के रह जाता है । ब्राह्मण की ये बातें सुन शंकर ने उस बालक से पूछा तुम कौन हो ? शंकर के प्रश्न का उत्तर इस आजन्म मूक बालक ने जो जब से पैदा हुआ आज तक कभी नहीं बोला था बारह श्लोकों में दिया और प्रत्येक श्लोकों के अन्त में "सनित्योपलब्धिःस्वरूपोऽहमात्मा" बराबर कहता गया अर्थात् मैं वही आत्मा हूं जो सदैव चैतन्य स्वरूप है । यह १२ श्लोक हस्तामलकीय बोध के नाम से प्रसिद्ध हैं जिसका गूढ़ अर्थ समग्रवेदान्त और उपनिषदों का सारांश है ।

शंकर ने तब कहा जैसा हाथ पर रक्खा हुआ आवले का फल समूचा सबका सब एक साथ दिखाई देता है वैसा ही इस बालक के उत्तर में समग्रवेदान्त का तत्त्व प्रकाशित है । इसलिये ये श्लोक हस्तामलकीय कहलावेंगे और इस बालक का नाम आज से हस्तामलक होगा—विप्रवर ! यह बालक पूर्व जन्म का योगी है घर गृहस्थी के कोई काम का नहीं है । यह कह हस्तामलक को अपने साथ ले वहां से चल दिये और शृङ्गगिरि पर्वत पर पहुंचे जहां मतङ्ग ऋष्यशृङ्ग आदि मुनि तपस्या कर सिद्ध हुए हैं । जहां से तुंगभद्रा नदी प्रगटी है जो मनुष्यों को स्पर्श मात्र से संपूर्ण कल्याण की देने वाली है । शृङ्गगिरि में कुछ दिन ठहर वहां के विद्वानों को अपना बनाया भाष्य और दूसरे २ ग्रन्थ पढ़ाय अद्वैत मत के सिद्धान्त का प्रचार उन लोगों में कराया । वह वही शृङ्गेरीपुर है जहां आज तक शङ्कर की स्थापित शारदा देवी की मूर्त्ति में सरस्वती पहले की हुई प्रतिज्ञा के अनुसार सदा सन्निधि रहती हुई अपने भक्तों की मनोकामना पूरी किया करती हैं । वहां विद्यापीठ नाम का मठ बनवाय भारती संप्रदाय का प्रचार किया जो पुरी गिरी इत्यादि इन की स्थापित दस संप्रदाय में एक संप्रदाय है । वहां तोटक नाम

परमविनीत गुरुभक्ति में बड़ा दृढ़ शिष्य को अपने शरण में ले समग्र विद्यापारङ्गत उसे कर दिया शिष्य भी पीछे से महा विद्वान् हो तोटका चार्य की उपाधि पाई। यह देह की छाया के समान तनमन से दिन रात गुरू की सेवा किया करता था। भूत मात्र पर दया करने वाला अत्यन्त विनीत पहले यह गिरि नाम का महामन्द बुद्धि था। एक दिन अपना अचला धोने के लिए नदी में जल लेने गया था शिष्यों को तन्या देने का समय था किन्तु तोटक को अनुपस्थित जान गुरू ने कहा ठहरो जब तक गिरि भी आ जाय। इस पर पद्मपाद को अपने सपाठी गिरि की मन्द बुद्धि और गुरू की समदर्शिता पर मुसकिराते देख और पद्म पाद को अपनी तीक्ष्ण बुद्धि का घंमड समझ मन से गिरि का स्मरण कर चौदहो विद्या निधान इसे कर दिया। गिरि जो पहले निपट मन्द बुद्धि था नदी से लौट दूर ही से तोटक छन्दों में गुरू की स्तुति करता हुआ आया।

भगवन्नुदधौ मृतिजन्मजले सुखदुःखझषे पतितं व्यथितम्।
कृपया शरणागतमुद्धरमामनुशाध्युपसन्नमनन्यगतिम्॥

मरण जननरूप भवसागर के मुह में गिर कर पीड़ित अनन्य गति मुझ को हे अशरण शरण गुरो अपनी कृपा का करावलम्ब दे उबारिये। तोटक छन्द में ५ श्लोक वैराग्य और आत्मज्ञान का निचोड़ गिरि के मुख से सुन गुरू ने इसे तोटकाचार्य की उपाधि दी। पद्मपाद आदि शिष्यो ने गुरू की महिमा का यह प्रताप जान अचरज में आय अपनी तीक्ष्ण बुद्धि का सब अभिमान दूर कर दिया। तोटकाचार्य का बनाया तोटक नाम का एक छोटा सा प्रकरण वेदान्त का अति उत्तम ग्रंथ अब तक संसार में प्रचलित है। उपरान्त पद्मपाद को देशाटन के लिए आज्ञा दे सुरेश्वराचार्य हस्तामलक आनन्द गिरि आदि शिष्यों के साथ कुछ दिन ऋष्यशृङ्ग पर्वत पर निवास करते रहे।

योगबल से अपनी माता का अन्त समय जान आकाश मार्ग से तत्क्षण वहां पहुंच मा को आतुर दशा में देख उसके चरणों को प्रणाम

कर सब भांत उसे अश्वासन दिया। माता ने भी अपने प्रियपुत्र को देख प्रसन्न हो चिरकाल तक पुत्र के वियोग का सब ताप दूर किया। शङ्कर इसे निर्गुण अद्वैत ब्रह्म का उपदेश देने लगे तब वह बोली बेटा निर्गुण अद्वैत ब्रह्म को मैंने आज तक कभी नहीं सोचा विचारा इस लिये इस अन्तदशा में इन सूक्ष्म विचारों की ओर मेरा मन नहीं जाता मुझे साकार सगुण ब्रह्म का मार्ग बतलाओ तब "अनाद्यन्तमाद्यं परं तत्वमर्थं चिदाकारमेकं तुरीयं त्वमेयम्। हरिब्रह्म मृग्यंपरब्रह्म रूपं मनोवागतीतं महः शैवमीडे"- इत्यादि भुजंगप्रयातछन्द के १४ श्लोकों में इन्होंने शिव की स्तुति किया शिव जी इस स्तुति से प्रसन्न हो अपने दूतों को भेजा शूल और पिनाक हाथ में लिये दूतों को देख यह बोली मैं इनके साथ नहीं जाना चाहती जन्म से आज तक मैंने कभी शिव की अराधना नहीं किया इससे मुझसे इनका परिचय नहीं है—तब "भुजंगाधिपभोगतल्पभाजं कमलाङ्कस्थलकल्पितांघ्रिपद्मम्" इत्यादि श्लोकों में विष्णु की स्तुति इन्होंने किया। इस तरह पर अपने पुत्र से इन सरस श्लोकों को पढ़ते हुये सुन पद्मनयन विष्णु भगवान् का हृदय में ध्यान करती हुई योगियों के समान इस ने तन त्याग दिया। यद्यपि संन्यासी के लिये मृतक की दाह क्रिया शास्त्र निषिद्ध है कुटुम्ब के लोग भी इस बात से असन्तुष्ट हुये किन्तु माता से उसकी समस्त और्द्धदैहिक क्रिया की प्रतिज्ञा कर चुके थे इस लिये अपने हाथ पिण्डदान इत्यादि सब कर्म किया। प्रार्थना करने पर भी इन के बन्धुजन जब अस्थि संचयन आदि कर्म में शरीक न हुये तब उनको इन्होंने शाप दिया कि तुम आज से वेद वहिष्कृत हुये। यति सन्यासी तुम लोगों की भिक्षा भी न ग्रहण करेंगे और तुम्हारे घर के पास ही श्मसान होगा तब से उस देश के ब्राह्मण वेद नहीं पढ़ते न उनके घर सन्यासी भिक्षा करते हैं। इस तरह पर माता को स्वर्गगति दे भगवत् शंकराचार्य अनेक पाखण्डमतों को दूषित करने के प्रयत्न में लगे किन्तु इसमें अपने मुख्य शिष्य पद्मपाद की सहायता की आकांक्षा से कुछ दिनों तक वहीं ठहरे रहे।

पद्मपाद अगस्त्याश्रम पुण्डरीकपुर आदि स्थानों में यात्रा करते

रामेश्वर को गये रास्ते में अपने मामा के घर बोझ समझ० पुस्तक सब छोड़ गये थे लौट कर आये तो सुना कि घर में आग के लग जाने से पुस्तक जिसे यह छोड़ गये थे सो भी उसी में भस्म हो गई। मामा इनका द्वैतवादी था घर में आग लग जाने का एक बहाना मात्र था वास्तव में उसका प्रयोजन शारीरकसूत्र पर जो इन्होंने टीका बनाया था उसको जला देने का था। पद्मपाद को यह वृतान्त सुन बड़ा दुःख हुआ बड़े उदासीन हुए तीर्थ यात्रा से लौट गुरु को आकर प्रणाम किया और अपने बनाये टीका के जल जाने का शोक प्रकाश किया। शंकर ने कहा मैं योग बल से यह वृतान्त जान गया था सुरेश्वराचार्य से कह भी दिया था। तुमने बहुत उत्तम तिलक बनाया था अस्तु पञ्चपादी तक जो तुमने मुझे ऋष्यशृङ्ग पर्वत पर सुनाया था मुझे प्रत्यक्षर याद है लिखलो उसके उपरान्त जो तुमने रचा वह अलबत्ता अब नहीं मिल सक्ता। यह कह पञ्चपादी तक प्रत्यक्षर वैसा ही लिखा दिया गुरु की इस अद्भुत धारणाशक्ति पर शिष्य सब बड़े विस्मित हुये। अपने भाष्य पर टीका बनाने को पहले गुरु ने सुरेश्वराचार्य को कहा था इस पर पद्मपाद और चितसुख आदि है शिष्यों ने एकान्त में प्रार्थना किया गुरो! सुरेश्वराचार्य वही मण्डन जिसे आपने वाद में परास्त कर अपना शिष्य बना लिया है जन्म से यह प्रवृत्तिमार्ग में रत रहा इस लिये कर्मकाण्ड में जैसी इसकी निष्ठा होगी वैसी ज्ञानकाण्ड में नहीं। इस कारण इसे यदि आप भाष्य का तिलक बनाने की आज्ञा देंगे तो यह उसका अर्थ बिगाड़ कर कर्मकाण्ड की ओर झुका लावेगा। सन्यास भी इसने बुद्धिपूर्वक नहीं ग्रहण किया किन्तु शास्त्रार्थ में परास्त हो लाचारी से इसने सन्यास ग्रहण किया है इससे यह हम लोगों को विश्वासपात्र नहीं जंचता। इसको अपने भाष्य का टीका करने की आज्ञा न दीजिये पद्मपाद आनन्दगिर दोनों बड़े योग्य शिष्य हैं इन्में से एक को इसके लिये आज्ञा दीजिये। सनन्दन ने कहा हस्तामलक भी इसमें सर्वथा समर्थ हैं आपके भाष्य पर इनका वार्तिक बड़ा उत्तम होगा करस्थ आमलक के समान आप के सिद्धान्त को अच्छी तरह जानते हैं इसी लिये आपने इन को हस्तामलक की उपाधि दी है

गुरु ने हँस कर कहा हस्तामलक बाल्य अवस्था में गुरुमुख से एक अक्षर भी नहीं पढ़ा न गुरु के द्वारा इस का उपनयनसंस्कार विधिवत् किया गया है न परमार्थ निष्ठ हो इसने वेदों को पढ़ा है पिता इसे पिशाचग्रस्त समझ मेरे पास लाया था। यह जन्म ही से आत्मज्ञान में लीन चित्त है इस की प्रवृत्ति इस में अच्छी तरह न होगी। यमुना के तट पर संसारिक विषयों से अत्यन्त निवृत साधुवृत्त कोई सिद्ध तपस्या कर रहा था एक ब्राह्मण की कन्या दो वर्ष का अपना बालक उस सिद्ध को तकाय आप स्नान करने चली गई बालक घुटनों से चलता हुआ कगारे से गिर यमुना में डूब गया तब वह विप्र कन्या रोती हुई मृतक बालक को ले सिद्ध के पास आई सिद्ध ब्राह्मणी को रोते देख दयार्द्र हो उसी बालक के शरीर में प्रवेश कर गये वही यह हस्तामलक है। यही कारण है कि इसे कोई पदार्थ अज्ञात नहीं है यह वाह्यवृति से सर्वथा निवृत्त है प्रपंच का तत्त्व समझने वाला मण्डन के समान दूसरा नहीं है। अस्तु यदि तुम लोगों की इच्छा नहीं है तो सुरेश्वर वार्तिक न बनावेगा तुम सब लोग वार्तिक बनाओ। सुरेश्वर से गुरू ने एकान्त में कहा ये शिष्य सब बड़े मत्सरी हैं तुम्हें नये भिक्षुक समझ इन्हें सन्देह है कि तुम्हारी प्रवृत्तिमार्ग से वासना नहीं हटी इस लिये तुम अपना अलग कोई स्वतंत्र ग्रन्थ रच मुझे दिखाओ। तिलक बनाने के लिये गुरू की आज्ञा न पाय सुरेश्वर बड़े उदासीन हुये और नैष्कर्मसिद्धि नाम का एक स्वतंत्र-ग्रन्थ बनाय गुरू के अर्पण किया। आदि से अन्त तक मनोहर पदों में इस ग्रन्थ को देख गुरू अत्यन्त प्रसन्न हुये और शिष्यों को भी दिखलाया गुरू ने आशीर्वाद दिया कि यह तुम्हारा ग्रन्थ सबों से आदर के योग्य होगा। सुरेश्वर ने कहा मैं आचार्य की पदवी पाने के लिये वार्त्तिक नहीं बनाया चाहता था न मुझे संसार में ख्याति पाने का लोभ था गुरू की आज्ञा का उल्लंघन न हो इस लिये मैंने यह परिश्रम किया है। (शिष्यों से) मेरे प्रति जो तुम्हें सन्देह था कि यह तत्वज्ञान में पूर्ण नहीं है इस लिये मैं शाप देता हूं कि तुम लोगों में किसी के बनाये वार्तिक संसार में प्रचार न पावेंगे। क्या बालक तरुण नहीं हो

जाता तरुण पीछे वृद्ध नहीं होता बन्धन और मोक्ष में .विरक्ति होना चाहिये गृहस्थ या भिक्षुक हो जाना कोई हेतु इस का नहीं है। सुरेश्वर को अनमन और उदासीन देख गुरू ने तैत्तिरीय बृहदारण्यक नृसिंहतापिनी पंचीकरणवार्तिक और अपने बनाये दक्षिणामूर्तिस्तोत्र पर वार्तिक रचने की आज्ञा दी। सनन्दन ने भी गुरू की आज्ञा पाय शारीरक भाष्य का टीका रचा जिसका पूर्व भाग पंचपादी के नाम से विख्यात हुआ जो उत्तरभाग का टीका बना वह वृत्ति के नाम से प्रसिद्ध हुआ। सुरेश्वराचार्य से गुरू ने कहा तुम दूसरे जन्म में वाचस्पति होकर मेरे भाष्य का टीका रचोगे। वह सनन्दन के भाष्य की समता पाय सब देशों में पण्डितों के बीच आदरणीय होगा इसी तरह पर आनन्दगिरि आदि शिष्यों को भी पृथक् २ ग्रंथ रचने की आज्ञा गुरू ने दी।

सहस्रों शिष्यों को साथ लिये सुधन्वा राजा पर सबों की रक्षा का भार रख और उसे भी अपने साथ ले श्रीशंकर दिग्विजय की इच्छा से सेतुबन्ध रामेश्वर की ओर पधारे। शैव, शाक्त, चक्राङ्कित, क्षपणक, बौद्ध, सौगत, चार्वाक, जैन, कापालिक आदि अनेक मत के जो २ लोग आये सबों को वाद में परास्त करते और उन के बीच अद्वैत मत का स्थापन करते रामेश्वर पहुंचे तहां रामेश्वर की पूजन आराधन के उपरान्त पांड्य चोल द्रविड़ आदि देश के लोगों को विजय कर कांची पहुचे यहां शिवकांची का पृथक् निर्माण किया। विनीत भाव से आये हुये अन्ध्रदेश वालों को अपनाय वेंकटाचल को पधारे। वहां से विदर्भदेश में गये तहां भैरवतंत्र में प्रवीण लोग शास्त्रार्थ करने को आये उनको शंकर के शिष्यों ने वाद में निरस्त कर उन्हें अद्वैतमतावलम्बी कर दिया। वहां से कर्णाट देश में जाने की इच्छा करते हुये शंकर से विदर्भ देश के राजा ने विनयपूर्वक निवेदन कर कहा। गुरो! कर्णाटदेश कापालिकों से इतना पूर्ण है कि आप सरीखे महात्माओं के जाने योग्य नहीं है वे सब वेदमार्ग के बड़े द्वेषी हैं जाने से वे आप का अनिष्ट करेंगे। सुधन्वा ने तब हाथ जोड़ कहा योगीराज! धनुष बाण लिए मैं आप की सेवा करने को सब भांत सन्नद्ध हूं तब कापालिक पामर आप क्या कर सक्ते हैं। शंकर वहां से उन

कापालिकों को शास्त्रार्थ में जीतने के लिये कर्णाट देश पधारे इन को आया हुआ सुन कापालिकों का झुण्ड साथ लिये चिता की राख देह भर में पोते त्रिशूल और मनुष्य की खोपरी हाथ में लिये मदपान से लाल नेत्र क्रकच नाम का कापालिक बड़े अभिमान-पूर्वक आकर इनसे पूछा। भस्म तुम धारण किये हो सो तो उचित ही है किन्तु पवित्र नर कपाल त्याग मिट्टी का करवा हाथ में लिये क्यों डोलते फिरते हो? मनुष्य का सिर और रुधिर में मिला हुआ मद्य श्रीभैरवनाथ को चढ़ाय भक्ति श्रद्धा से उनका पूजन क्यों नहीं करते? इस तरह बकता हुआ क्रकच को धिक्कारते हुये सुधन्वा ने गुरू के पास से हटा दिया। तब यह मूर्ख क्रोध से भौं चढ़ाय त्रिशूल तान बोला जो मैं इस त्रिशूल से तुम सबों का सिर काट भैरव का पूजन न कर सका तो मैं क्रकच कैसा। अपनी सेना समेत सहसा आ टूटा। इन कापालिकों की सेना में कितनों को सुधन्वा ने युद्ध में मार गिराया कितनों को शंकर ने हुंकार ध्वनि से यमपुरी का पाहुना कर दिया। इस तरह अपनी समग्र सेना का संहार देख झुंझ-लाया हुआ क्रकच शङ्कर के समीप आय बोला। ऐ मूढ़! तू मेरे प्रभाव को नहीं जानता देख मैं क्या करता हूं। यह कह मनुष्य की खोपड़ी मद्य से भर आधा पी आधा पृथ्वी पर धर नेत्र मूंद भैरों का ध्यान करने लगा। तत्क्षण मनुष्य के सिर का माला पहिने जलते हुये अंगारे के समान त्रिशूल हाथ में लिये अट्टहास ध्वनि करते भैरवनाथ प्रगट हो क्रकच ही का सिर त्रिशूल से काट शङ्कर को बहुत सा अश्वासन दे अन्तर्ध्यान हो गये। इस तरह पर बामाचारी चार्वाक बौद्ध इत्यादि अनेक पाखण्ड मत वालों का सुधन्वा राजा के द्वारा संहार कराते पश्चिम समुद्र के तट पर द्वारिकापुरी में जा पधारे। यहां महा शैव नीलकण्ठ को परास्त कर अपना शिष्य बनाया और गुजरात देश भर में विजय पाताका स्थापित किया। पञ्चरात्र के मत पर चलने वाले वैष्णव आये उन्हें भी जीत अद्वैत दीक्षा का अधिकारी किया। वहां से यात्रा कर उज्जैनी को गये तहां महाकाल का दर्शन और पूजन कर भट्टभास्कर के पास पद्मपाद को भेज कहलाया। या तो मेरे भाष्य को

स्वीकार करो नहीं तो हम से शास्त्रार्थ करो। यह भास्कर भेदवादी था जीव और ब्रह्म में भेद इसका सिद्धान्त था और मण्डन के समान इसे भी अपने पाण्डित्य का बड़ा अभिमान था। बाद में हार जाने पर उज्जैनी भर में इसकी चर्चा फैल गई और वहां के विद्वानों ने आय शंकर को सविनय प्रणाम कर इनकी सर्वज्ञता सबों ने स्वीकार किया। उपरान्त जैनमतावलम्बी कई एक आये उन्हें भी बाद में इन्होंने निरस्त किया। प्रभाकर, न्याय भाष्य के वार्तिककार उदयन खण्डनखाद्य कर्ता श्रीहर्ष के पाण्डित्य का गर्व दूर कर उन्हें अपना अनुयायी बनाते कामरू देश में पहुंचे। तहां अभिनव गुप्त जिसने वेदान्तसूत्र के भाष्य का अर्थ शक्ति परत्व किया था बिना शास्त्रार्थ ही के लोक में अप्रतिष्ठा की डर से इन का शारीरक भाष्य स्वीकार कर इनका शिष्य हो गया। इसके उपरान्त कोशलदेश, मिथिलादेश, बङ्गदेश, उड़ैसा आदि देशों में घूमते रहे और जहां गये वहीं इनकी प्रतिष्ठा की गई। गौड़ देश में मुरारि मिश्र और धर्मगुप्त मिश्र को शास्त्रार्थ में जीत वहां अपना यश स्थापित किया। इस तरह सब देशों में अपना यश स्थापन करने से समस्त हिन्दुस्तान में अद्वैत मत चक्रवर्ती राज्य के समान निष्कण्टक हो गया। अनेक देशों में भ्रमण करने से जुदे २ देशों का जल वायु सेवन के विकार से शङ्कर को भगन्दर रोग हो गया। दूर २ देश के वैद्य आये किसी से रोग अच्छा न हो सका शङ्कर भी शरीर में ममता त्याग परलोक यात्रा के लिये सन्नद्ध हो गये थे। तब पद्मपाद प्रणवमन्त्र का जप गुरू की आयुष्य वृद्धि के संकल्प से करने लगे। शङ्कर दिग्विजय वाले ने लिखा है कि इन को भगन्दर रोग इस लिये हुआ कि अभिनव गुप्त जिसे इन्होंने परास्त किया था वह तांत्रिक और शाक्त था उसी ने कोई ऐसा मारण प्रयोग किया कि इन्हें भगन्दर हो गया प्रणव के जप से शङ्कर अच्छे हो गये अभिनव गुप्त मर गया। रोग मुक्त होने पर गौड़पाद इन से मिलने को आये। ये गौड़पाद वही हैं जिन के शिष्य गोविन्दनाथ थे इस लिये गौड़पाद शङ्कर के दादा गुरू हुये। शङ्कर ने गौड़पाद की भक्ति श्रद्धापूर्वक यथोचित पूजा कर अपना भाष्य जिसमें गौड़पाद

की शारीरक सूत्रों पर कारिका का विषद् अर्थ किया गया था तथा माण्डूक्य उपनिषद् का भाष्य और माण्डूक्य पर जो गौड़पाद की कारिका थी उसका भी भाष्य इन्हें दिखलाया । गौड़पाद यह सब देख बड़े प्रसन्न हुये और अनेक बरदान दे अपने स्थान को पधारे । उपरान्त यह काश्मीर को गये तहां शारदा नाम का मठ है जिसके चारो दिशा में चार फाटक लगे थे और वे फाटक सदा बन्द रहते थे जिस दिशा का मनुष्य सर्वज्ञ हो वही उस दिशा के फाटक को खोल भीतर जा सकता था । शङ्कर दक्षिण द्वार पर पहुंच भीतर जाने लगे तो अनेक विद्वान् हर एक विषय के आय उपस्थित हुये और इन्हें भीतर जाने से रोकने लगे उन सबों को बाद में हराय आप भीतर जाय मठ के मध्यभाग की वेदी पर सुशोभित हुये । सबों ने जयध्वनि के साथ इनकी सर्वज्ञता स्वीकार कर लिया । इस तरह पर ३२ वर्ष की अवस्था तक अपने योगबल और अद्वितीय अनुपम पाण्डित्य से बौद्ध और जैनियों के हांथ से भारत का उद्धारकर कैलाश को सिधार गये । शङ्कर किस समय हुये इस पर जुदे २ लोगों का जुदा २ मत है पर विक्रमार्क के छठवे शताब्द के अन्त में और सातवें शताब्द के प्रारम्भ में इनकी स्थिति संसार में अधिक प्रमाण के योग्य मालूम होती है । सिवाय शङ्कर दिग्विजय के कोई दूसरा ज़रिया हम को इनके जीवन के वृत्तान्त जानने का नहीं है दिग्विजय वाले ने जो कुछ लिखा है वह पुराणों का ढंगलै निरी कविता किया है और ग्रन्थकार माधवाचार्य को शास्त्र के प्रत्येक विषय में कहां तक गम्य था सो भी शङ्कर के जीवनचरित्र में उन्होंने प्रगट किया है । जो हो ! शङ्कराचार्य हिन्दुस्तान के एक अनुपम रत्न हुये हैं और क्षतिग्रस्त हिन्दू-धर्म का बहुत कुछ उद्धार किया और ऐसे ढंग से किया कि सर्वसम्मत और सर्वमान्य हुये । अब इस समय ऐसे एक संशोधक की बहुत आवश्यकता है । स्वामी दयानन्द कुछ हुये थे किन्तु कई बातों में ऐसे चूके कि सर्वसम्मत न हो सके । यद्यपि दिग्विजयकार ने अपने ग्रन्थ में कई ठौर चक्राङ्कितों से शङ्कर के शास्त्रार्थ की चर्चा की है किन्तु रामानुजाचार्य और पूर्णप्रज्ञदर्शन के प्रवर्तक मध्व दोनों इनके उपरान्त हुये हैं । जिस

का खण्डन शङ्कर ने किया है। वैष्णवों की उस चक्राङ्कित संप्रदाय के प्रवर्तक बोधायन ऋषि और नारद पंचरात्र है उसी को रामानुज और मध्व ने पल्लवित किया है। दिग्विजय से आकर ग्रन्थ के पूर्ण पाण्डित्य को तो वही पा सकता जो मीमांसा, न्याय, कणाद, पातञ्जल, वल्कि, बौद्ध और जैनियों के सिद्धान्त से भी जानकार हो किन्तु शङ्कर के जीवनचरित्र में ऐतिहासिक भाग को संग्रह करने में मैंने कहीं से त्रुटि नहीं की। आशा है पढ़ने वालों को कुछ न कुछ इस से चित्तविनोद हो ही गा इति।

ज़ंद और बकर की बात चीत।

ज़ं०—क्या तुम सोचे थे मैं हमेशा अन्धा और ना समझ बना रहता और कयामत तक कभी न चेतता।

बकर—मैं तो यही चाहता था और ऐसे ही ढंग से चल रहा था। ऐसे चक्कर में तुम्हें छोड़ रक्खा था कि कभी तुम उस भंवर जाल के बाहर न होते।

ज़ं०—तो तुम ने मुझे इसी लिये लुंज पुञ्ज कर डाला और हम यहां तक सुस्त और काहिल हो गये कि एक पांव आगे बढ़ना भी हमारे लिये दुशवार था।

ब०—मैंने तवारीखों में यह पढ़ा कि तुम कई सौ वर्ष से गुलामी में पड़े हो और गुलाम रहना पसन्द करते हो तब तुम्हारी इस पसन्द का फ़ाइदा मैं क्यों न उठाता।

ज़ं०—तो क्या तुम खुदा की कुदरत और कुदरत के कानूनो को पलट दिया चाहते हो। नहीं जानते यह "प्रकृति परिवर्तन शील है" इस कुदरत में हमेशा अदल बदल हुआ करता है कभी एक ही तरह की नही रहीं।

ब०—अबतक जो रंग ढंग तुम्हारा था उससे मुझे यही मालूम हुआ कि तुम्हारे लिये कुदरत को भी लाचार हो अपना तर्ज़ बदलना पड़ा "चांद चलै सूरज चलै चलै जगत व्यौहार। अचल काहिली हिन्द की

रही सदा एकतार" । हाय ! मुझ को ताज्जुब है कि तुम अब क्या थे क्या हो गये । क्या कभी मुमकिन है कि सूरज पच्छिम में उगेगा और रात दिन हो जायगी ?

ज़ै०—सच कहते हो यह रोशनी तो पच्छिम से ही हमें मिली; ज़रूर उसी ओर सूरज भी उगा तो क्या अचरज । नहीं जानते अघटित घटना पटीयान् परमेश्वर सर्वशक्तिमान् है वह असंभव को भी संभव कर देता है । यही एक उदाहरण देखो कि जो हमेशा से बुज़दिल मशहूर थे, जिन की ढीली धोती से कभी विश्वास नहीं होता था कि इनमें बहादुरी आवेगी, वे इस समय बंगाली अपनी जाति की जाति को वीर बनाने की चेष्टा में लगे हैं और कुछ उनमें से जाने पर खेल रहे हैं । तो जान पड़ा कि ज़रूर यह कोई कुदरत का खेल है ।

ब०—क्या तुम चाहते हो मैं न रहूं ।

ज़ै०—नहीं २ तुम हमारे सिरताज हो कर रहो । कामधेनु जिसपर हमारा और तुम्हारा दोनों का दावा है और हमारा तो हाड़ मास सब उसी कामधेनु का है अन्त में उसी में मिल भी जायगा । तुम तो आये तरह तरह की हिक्कमत लगाय जहां तक दुहते बना उसे दुहा चंपत हुए । हम मुह ताकते ही रह जाते हैं तुम सर्वस्व निगल बैठते हो । सार पदार्थ खींच लेने पर काफी छिलका और भूसी तक नहीं छोड़ते कि हम उसी से अपना निर्वाह करते । हां जी रहे हैं सही पर नकटा जिया बुरे हवाल की भांत सर्वथा निर्जीव । और शायद यही तुम चाहते भी हो कि इनमें बल पौरुष न बढ़ने पावे नहीं तो ये हमारी बराबरी का दावा करने लगेंगे । पर अब सो होना नहीं है ।

ब०—छिः पांव की धूल सिर पर चढ़ने का मन कर रही है । अच्छा लो अब हम जाते हैं लार्ड मिंटो से कहेंगे कि डिटेकटिवों का नम्बर बढ़ा दें, ठौर २ प्यूनिटिव पुलिस कायम करें और भी जो कुछ हमसे बन पड़े । सब कर गुज़रेंगे जिसमें तुम और लुंज पुंज बन बैठो ।

ज़ै०—अच्छा तो हम भी चिताये देते हैं तुम मन आवे सो कर डालो पर तुम्हारी इन चालों से हमारा यह दांव पेंच रुकने वाला नहीं ।

तुम्हारे ही ऐसे छोटे चित्त के लोगों की चाल से गवर्मेंट का प्रताप जो अब तक अखण्ड था उसमें ग्रहण लगना ज़रूर शुरू हो गया है । हमारे विश्वास के अनुसार गवर्मेंट धर्म से चलेगी तब ही कल्याण होगा ॥
(दोनों ने अपनी २ राह ली)

भविष्य के चिन्ह ।

यह तो सभी कह रहे हैं कि संसार परिवर्तन शील है किन्तु ये परिवर्तन किसी नियम के साथ होते हैं सो नहीं जाना जाता । क्या जड़ क्या चैतन्य सब एक चक्कर में घूमते रहते हैं ज्यों २ यह चक्र घूमता है त्यों २ नये २ सामान दिखलाता है और उसी को हम परिवर्तन इस नाम से पुकारने लगते हैं । अगर उस चक्र के पूरे दायरे को देख डालें तो मालूम होगा कि कोई नई बात किसी खास मौके पर नहीं हुई वल्कि पहिया घूमते २ जब उस जगह पर फिर आ जायगी तो फिर वही बात पैदा होगी । जैसा ग्रहण को ज्योतिर्विद् लोग सिद्ध करते हैं कि २१ वर्ष ६ महीने का एक घेरा है और उतने समय के उपरान्त फिर वही ग्रहण उसी तरह का उसी समय उस देश में आ पड़ता है। वृक्ष आदि अचल सृष्टि में भी सब इसी नियम के अनुसार देख पड़ते हैं । बीज वृक्ष से धरती पर गिरा, नया पौधा उगा, बढ़ने लगा, फला फूला, फिर बीज हुआ गिरा पौधा उगा इत्यादि । इसी तरह जाड़ा गरमी दिन रात सुख दुःख स्वतंत्रता परतंत्रता आदि सब इसी नियम पर बंधे हुये चक्कर दे रहे हैं । आज जो समस्त संसार को परास्त कर चढ़ा बढ़ा दिखाई देता है कल वही अपना चक्र पूरा करने पर ज़मीन में लेटा हुआ परांधीनता का दुःख झेलता देख पड़ेगा । ईश्वर की इस अद्भुत रचना में कोई ऐसी ताकत नहीं है जो प्रकृति के इन नियमों का उल्लंघन कर सके । जो कौम गिरी हुई है उसके लिये उम्मेद और खुशी का मौका है क्योंकि कुदरत का क़ानून यह बतलाता है कि इसके बाद ही उसके उठने की बारी है और वह ज़रूर फिर उठैगा । पलताय वह क़ौम जो अपने मुकाबिले दूसरे को कुछ माल नहीं समझती क्योंकि इसके बाद Next stage कुदरत का कानून उसे गिरी हुई दशा में लावेगा । इस समय हिन्दुस्ता-

न पर यह.क़ानून सब भांत लग रहा है । आज कल इसकी दशा बड़ी हीन दीन है बुद्धि पौरुष विद्या धन सब में हेठा हो रहा है । पेट भर अन्न मिलना कठिन हो रहा है । गावों में जाय देखिये तो पीपल के पेड़ के तले बीसों मनुष्यों को पिपरौली बीनते हुए पाओगे । जिनके शरीर में मांस का नाम नहीं है पिपरौली के एक २ दाने के लिए ज़मीन खुजहार रहे हैं । दूसरे ओर शहरों में अमीर लोग नाच कूद खेल तमाशों में अपना धन लुटा रहे हैं, ऐयाशी में डूबे हुए प्याले पर प्याला चल रहा है; यार दोस्तों में कहकहें उड़ाते हुए चैन से दिन काटते हैं । दीन प्रजा क्या दुःख झेल रही है इस बात पर कभी ध्यान देने की उन्हें कोई ज़रूरत ही नहीं है । चारो ओर अनीति का डंका पिट रहा है । विवेक और विचार का कहीं नाम नहीं है । भारतवर्षीय स्वार्थ की तस्वीर बने रहे हैं । पर ये बुराइयां क़ानून कुदरत के तोड़ने की ताकत अपने में नहीं रखतीं । अनेक कारणों से देर ज़रूर लगैगी; कौमीयत का बीज जल्द न जमैगा । भारतोन्नति का वृक्ष खाद मांगता है पर खाद के देने में जो दुख सहना पड़ेगा उससे सब लोग मुंह मोड़ते हैं; तकलीफ़ कोई नहीं बरदाश्त किया चाहता और इसका फल फूल सबी तोड़ा चाहते हैं । बिना खाद पड़े पेड़ कभी हरा भरा हुआ है । रेगिस्तान और बरूली धरती में फूट अलबत्ता बहुतायत से उपजती है । भारत को गारत होते सदियां गुज़र गई हैं । अब तक तो इसका बीज जल भुन गया होता । भारत के अच्छे दिनों में हमारे महात्मा ऋषि मुनि यदि बीज को संरक्षित न रखते और पूर्वज क्षत्री गण अपने बाहु बल के विक्रम से इसे कायम न रखते । पश्चिम का पाला तो इसे बिलकुल जला चुका था कहीं नाम को शेष न रहता । नियम के अनुसार इस बार वह चक्कर पूर्व की ओर से चला । जापान उसका अग्रसर हुआ है । कुदरती क़ानून की करतूत से ऋतु बिलकुल बदल गई है । कहीं २ हरियाली नज़र आने लगी है । बीज ने कुछ २ ज़मीन पकड़ना शुरू किया है । किन्तु तरी अब तक उस बीज को न मिली थी । उसी कुदरत के क़ानून के द्वारा जहां तहां देशानुराग की दो चार बूंद भी टपकने लगी ।

माली जो उस बीज से उगे पौधों को सम्हाल सकें जन्म ले उसकी रक्षा के लिये उद्यत हो गये। पर यह माली सामान्य माली नहीं है। स्वामी रामतीर्थ ने कहा है। "जिसको दुनिया का नाजनखरा नहीं हिला सका वह मनुष्य अवश्य सारे संसार को हिला देगा"। ये माली उसी तरह के निकले और तन मन से भारत को गुलिस्तां बनाने में लग पड़े। अब रही खाद की कमी। सो जैसा इस समय राजनैतिक जोश उमड़ रहा है उससे बोध होता है कि लोग अपनी जान तक को उस खाद में देने को बल्कि खुद खाद हो जाने को मुस्तैद हो रहे हैं। सच है 'ना हमस्मीतिसाहसम्" हम नहीं हैं ऐसा समझ लेने वाला जौन चाहे तौन साहस का काम कर डाल सकता है। और इसी की हमारे देश में बड़ी कमी क्या सर्वथा अभाव रहा है। पुरानी बासना के लोगों से यह उम्मीद करना कि ये देश के काम में अपने को खाद बना डालेंगे व्यर्थ है। खाद बनने की आशा उन नये केड़ों से अलबत्ता की जा सकी है जो स्कूल और कालेजों में अभी शिक्षा पा रहे हैं। भारत के भावी कल्याण सूचक चिन्ह प्रगट होने लगे हैं। देश की सेवा के लिये स्वयं सेवकों के दल बनने लगे हैं। इन स्वयं सेवकों का समूह इन देश उद्धारका बड़ा अच्छा द्वार है। देश सेवा ही को जिन्होंने मुख्य धर्म मान रक्खा है और इनकी तादाद दिनों दिन बढ़ रही है। जल्द वह समय हम देखेंगे कि स्वयं सेवक बड़े २ शहरों में क्या एक २ छोटे ग्राम में भी उपज खड़े होंगे। पराधीन जाति को स्वच्छन्दता के योग्य बनाने के ये बहुत बड़े शुभ लक्षण हैं।

आर० बी० शुक्ल

"बम्" क्या है ?

(लावनी)

(१)

कुछ डरो न इससे केवल बुद्धि भरम् है

सोंचो यह क्या है जो कहलाता "बम्" है ।

यह नहीं "स्वदेशी आन्दोलन्" का फल है ।

नहीं "वायकाट" "अथवा" "स्वराज्य" की कल है ॥

नहि भारत बासी नाम भी इस्का जाने ।

नहिं क्रिया चलाने की इस्की पहचाने ॥

नहि कभी स्वप्न में देखो पत्त गरम् है ॥ सोंचो ॥

(२)

नहि समाचार कोई लेक्चर बाज़ों से ।

है हुआ प्रगट अथवा स्वदेश काजों से ।

नहिं है " बन्दे मातरम्" मंत्र का कर्तब ।

यह दोष लगाना निश्चय मिथ्या है सब ॥

नहि हिंद वासियों का यह कभी करम् है ॥ सोंचौ ॥

(३)

"यह" है एंग्लोइ-णिडयन पत्र की माया ।

जिनने अंगरेज़ों को मिथ्या भड़काया ॥

जो हुआ .ज़ुल्म निर्दोषी हिन्दुन ऊपर ।

तिससे यह निकला इस स्वरूप में बनकर ॥

निश्चय जानों "यह" दिलका पका वरम् है ॥ सोंचो ॥

(४)

है केवल इंगिलश शिक्षा की बलिहारी ।

ये हैं यूरुप देशों की रीतें सारी ॥

"यह" हिन्दवासियों के दुःखों का सर है ॥

बैरियों का उनके उगला हुआ ज़हर है ॥

सम्पादक मंडल वा सबी कहैं अधरम हैं ॥ सोंचो ॥

(५)

अब खूब सोंच कर इस्को ज़रा विचारो।
औ इतिहासों को पढ़ कर मर्म निकारो॥
नहि कहीं बहक कर अब जल्दी करदेना।
फिर भी पीछे का ध्यान हृदय धर लेना॥
वहकाने वाला होता महा अधम है॥ सोंचो॥

(६)

जब जब नृप अत्याचार महा करते हैं।
औ प्रजा दुखी चिल्लाते ही हरते हैं॥
नहि दीनों की जब कहीं सुनाई होती।
तब इतिहासों की बात सत्य ही होती
"माधव" कहता, यह किस्का बुरा करन है?॥
सोंचो यह क्या है जो कहलाता बम् है॥

मौखिक राजभक्ति।

गवर्नमेंट के कर्मचारी जो ऐसी चतुराई से हमारा शासन कर रहे हैं इन मौखिक राजभक्तों को न जानते हों सो नहीं है। कर्मचारी गण खूब समझे हुये हैं कि ऐसे लोगों के कथन का क्या गौरव है। हाल में यहां के कई एक ताल्लुकेदार और कतिपय महाजनों ने बम् के गोले पर शोक प्रकाश करने की एक मीटिंग मेओहाल मे की थी पढ़े लिखे लोग तथा वकील वर्ग इसमें शामिल न थे। हम लोगों का छिद्र देखने वाला दिली दुश्मन पायोनियर ने इसे छाप भी दिया है। जो स्पीच इस्मे पढ़ी गई वह ऐसी भद्दी थी कि शिक्षित मण्डली कभी इसपर सहमत नहीं हो सकती। इसमें एक रिज़ोल्यूशन अवैतनिक डिटेक्टिव बनाने के अभिप्राय का भी है। सरकार हम लोगों का कहा मानती और प्रजा को उनका हक्क देने की प्रार्थना का खयाल करती तो कभी ऐसे उपद्रव न होते। तब मौखिक राजभक्ति के जोश में भर इस अवैतनिक डिटेक्टिव बनने की क्या ज़रूरत थी। अवैतनिक डिटेक्टिव के काम का दम भरने वालों से सरकार के अधिक शुभेच्छक

हम उन्ही को कहेंगे जो मुल्की इन्तिज़ामो में सरकार को सुधार सुझाने वाले हैं। इतने कम लोगों की पबलिक मीटिंग आजतक मेओहाल में कभी नहीं हुई इससे सिद्ध हुआ कि यह मीटिंग निरे खुशामदी लोगों की थी ऐसों ही की करतूत से यू० पी० और प्रान्तों के मुकाबिल पीछे हटा हुआ है और इसके उभड़ने की कम आशा है।

बम् से हल चल।

इस समय हिन्दुस्थान में बम के कारण जो हल चल मची है उस की ओर केवल हिन्दुस्थान ही नहीं कुल दुनियां की आखें लगी हैं। चाहे दुनियां के और देश इस की कड़ी आंच सह चुके हों किन्तु हिन्दुस्थान् के लिये यह नई आंच है। इसका कारण ऐङ्गलो इन्डियन पत्र स्वदेशी आन्दोलन बतलाते हैं। इसको ज़ोर के साथ दबाने का सर्कार को वे परामर्श देते हैं और अनेक कानून बनवाना चाहते हैं। उनकी लाल लाल आंखें गरम दल तथा उसके अगुओं पर विशेष है। यदि वे लोग इस की तह तक पहुंच कर इसकी जड़ का अनुसन्धान करते तो उनको पता लग जाता कि इसका एक मात्र कारण एक देश व्यापी असन्तोष है। यह एक साधारण नियम है जब किसी उन्नत जाति के बुरे दिन आते हैं तब उसको नई जातियां नये तेज और उत्साह से उत्साहित हो कर अपने बश में कर लेती है और फिर धीरे २ अभिमान से अन्धे हो कर वे जेता अपने ज्ञान चक्षु खो देते हैं। उनको तुच्छ, नीच, गुलाम, समझते हैं। बात बात में दबा कर उनको अनेकानेक कष्ट देते हैं। इस तरह दबते २ और कष्ट पाते उस बुझी हुई गुलाम जाति को तकलीफ़ और असन्तोष की आग सोने के समान गलाती है और उसकी सब मैल छूट कर वह साफ़ और चमकदार बन जाती है। उसमें नये उत्साह की चमक आ जाती है देश भक्ति की प्रभा फैलती है और उसमें कुछ ऐसे वीर उत्पन्न हो जाते हैं जिनको देश के सामने प्राण क्या स्वर्ग भी तृणवत् है।

केवल अङ्गरेज़ी पत्र नहीं कुछ देशी पत्रों की राय भी उपरोक्त पत्रों से मिलती जुलती है। उनकी राय में ऐसों को देश भक्त कहना

महा अन्याय है। लेकिन हम न्याय अन्याय कुछ जानते ही नहीं और न्याय है भी नहीं। जब निर्बल का मुकाबिला बलवान् से पड़ता है तो बलवान की इच्छा ही न्याय समझी जाती है। जब युद्ध में हार कर एक प्रतिद्वंद्वी कमज़ोर सिद्ध हो जाता है तो नेता की इच्छा ही उचित सन्धि कही जाती है। जब किसी अङ्गरेज़ और हिन्दुस्थानी का मुक़द्दमा फ़ौजदारी अदालत में होता है तो जिस बात में अङ्गरेज़ का फ़ायदा है प्रायः वही न्याय होता है। देशी पत्रों में प्रयाग के प्रधान माडरेट मुखपत्र अभ्युदय ने जो विचित्र सम्मति इस पर प्रगट किया है ज़रा उसको देखिये—"उग्र उपायों को काम में लाना देश के लिये अच्छा नहीं है। इस से शान्ति प्रिय लोगों को कष्ट होता है इससे देश की उन्नति नहीं सक्ती, यह आर्य प्रकृति के विरुद्ध है"॥

उग्र उपायों को काम में लाना देश के लिये अच्छा। और नहीं है यह बहुत ठीक है। शान्ति प्रिय लोगों को इस्से कष्ट होता है यह भी ठीक है। यह "आर्य प्रकृति के विरुद्ध है।" किन्तु धर्म के साथ वीरता आर्य लोगों के विरुद्ध नहीं है। धर्म युक्त वीरता ही जातियों को महान् बनाती है। यही सभ्यता का मूल है। और यही वीर आर्य लोगों की परम प्रिय वस्तु है॥ हम अपने प्रधान धर्म ग्रंथ वेद से लेकर उपनिषद् और पुराणों पर दृष्टिपात करते हैं तो आर्यों की वीर प्रकृति का खूब परिचय मिलता है। भारत का गौरवसूर्य उसी समयसे अस्त है जब से आर्यगणों ने शान्त प्रकृति धारण किया। यूनानियों का गौरव तभी तक था जब तक उनमें वीरता थी। जब से रूमियों ने उनको परास्त किया चाहे वे लोग सभ्यता में काव्यकला में बढ़ गये हों लेकिन वह इज्ज़त कहां। बम् के संबन्ध में जो लोग सर्कार को कड़ाई करने और इनको दबाने की सलाह देते हैं वे गवर्मेंट के शत्रु हैं। यह बात इतिहासों से सिद्ध है ऐसी बातें कड़ाई से क्या दबाई जा सकती हैं? जब तक ऐङ्गलो इन्डियन पत्र कड़े लेखों से भेद भाव बढ़ाते जांयगे; सर्कार प्रजा की पुकारों को उपेक्षा की दृष्टि से देखती जायगी; जिन अधिकारों के वे योग्य हैं उनके वे अयोग्य साबित किये जांयगे; सब से बढ़कर जब तक वे पेट की ज्वाला से दग्ध होकर जीवन त्याग करते जांयगे, हलचल भी बढ़ता ही जायगी। B. शुक्ल—

॥ बच्चोंने तत्काल जानलिया ॥

देखिये दो बालिकाएं इस लाभकारी मीठी दवाको देखकर कैसी प्रसन्न होरही हैं

हमारा सुधासिंधु इतना प्रसिद्ध होचला है जिससे अब यह बात नि[illegible] सिद्ध होचुकी है कि नीचे लिखी बीमारियोंके लिये बिना पूछेही लोग मंगाने [illegible] जैसे कफ, खांसी, जाडेका बुखार, हैजा, शूल, दस्त, संगृहणी, गठिया, द[illegible] हाना, जी मचलाना, बालकों के हरे पीले दस्त और कै करना इनको सि[illegible] खुराकमें अच्छा करता है. इसके हजारों सार्टिफिकट मौजूद हैं जिनके लिये [illegible] १२५ चित्रों सहित सूचीपत्र मंगाकर देखिये. मुफ्त भेजेंगे सुधासिन्धु की की[illegible] की शीशी ६ लेनेसे १ भेट १२ लेनेसे पांच रु०

देखिये श्रीमान् राजा इन्द्रजीत प्रताप शाह बहादुर तमकुही जिला गोरखपुर योग्य[illegible] क्या आज्ञा करते हैं।

महाशय आपका एक दरजन सुधासिंधु पहुंचा जो आपने भेजाथा यह दवा [illegible]हुत लाभ दायक है बुखार और पेटके रोगों में तौ बहुतही फायदेमन्द है और बहुत [illegible]रोगोंमें वैसा ही फायदा करता है और महरबानी करके आध पाव चन्दनादि तैल [illegible]और वासारिष्ट भेजिये। मंगाने का पता—

क्षेत्रपाल शर्मा मालिक सुख संचारक [illegible]